बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 126

गरीबी से निजात

हाल के वर्षों के विभिन्न अनुमानों से यह संकेत मिलता है कि देश में गरीबी के स्तर में काफी कमी आई है। अगर गरीबी के दायरे में आने वाले परिवारों को बचाया जा सका तो परिणाम और बेहतर होंगे। नैशनल काउंसिल फॉर एप्लाइड इकनॉमिक रिसर्च ने इस बारे में एक नया शोध पत्र प्रकाशित किया है जिसमें नागरिकों के लिए सुरक्षा ढांचे को नए सिरे से तैयार करने की बात कही गई है। 'रीथिंकिंग सोशल सेफ्टी नेट्स इन अ चेंजिंग सोसाइटी' शीर्षक वाले इस शोध पत्र में कहा गया है कि 2011-12 में 21.2 फीसदी से 2022-24 में 8.5 फीसदी तक गरीबी के स्तर में उल्लेखनीय कमी आई है। यह आकलन तेंडुलकर गरीबी रेखा के आधार पर किया गया है। भारत मानव विकास सर्वेक्षण 2004-05, 2011-12 और 2022-23 के आंकड़ों का इस्तेमाल करके शोध पत्र में कहा गया है कि 2024-25 में जिन 8.5 फीसदी लोगों को गरीबों के रूप में चिह्नित किया गया उनमें से 3.2 फीसदी 2011-12 से ही गरीब बने हुए हैं जबकि 2.3 फीसदी लोग नए सिरे से गरीबी के शिकार हुए हैं।

अध्ययन में इस बात को रेखांकित किया गया है कि पुरानी गरीबी का स्तर कम हुआ है जबकि अस्थायी गरीबी बढ़ी है। ऐसे मामलों में परिवार समय-समय पर गरीबी के भंवर में गिरते और उससे उबरते रहते हैं। इसमें बार-बार गरीबी के शिकार होने वाले परिवारों को संवेदनशील ठहराते हुए कहा गया है कि गरीबी रेखा और उससे 200 फीसदी ऊपर तक के परिवार इस श्रेणी के हैं। कई अकादमिक अध्ययनों में भी इस बात के प्रचुर प्रमाण मिले हैं जो ऐसी संवेदनशीलता बढ़ाने वाले कारकों को चिह्नित करते हैं। उदाहरण के लिए परिवार में बड़ी संख्या में बच्चों का होना या एक परिवार में आश्रितों की संख्या अथवा भूमिहीनता की स्थिति लोगों के संवेदनशील होने की संभावना बढ़ा देते हैं। बाहरी झटके मसलन प्राकृतिक आपदा, परिवार का ध्यान रखने वाले मुखिया की बीमारी या उसकी मौत अथवा पेशाजनित अवसरों में कमी भी परिवारों को किसी भी समय गरीबी के दुष्चक्र में उलझा सकती है। देखा तो यह भी गया है कि सामाजिक और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के परिवार मसलन अनुसूचित जाति और जनजाति के परिवार अथवा अल्पसंख्यक समुदाय के परिवार इस तरह के जोखिम में अधिक होते हैं।

शोध में गरीबी की गतिशील प्रकृति को रेखांकित किया गया है और सामाजिक सुरक्षा उपायों को लक्षित करने की मौजूदा व्यवस्था की कमियों को उजागर किया गया है। मौजूदा व्यवस्था गरीबी रेखा के नीचे के संकेतकों पर आधारित है और उसकी अपनी सीमाएं हैं जो इसके असर को कम करती हैं। पहली बात, गरीबी रेखा को लेकर ही काफी बहस है। आलोचक कहते हैं कि गरीबी रेखा की सीमा मनमाने ढंग से तय की गई है जो किसी तरह केवल जीवित रहने से संबंधित है। हालांकि हालिया परिवार खपत व्यय सर्वे के आंकड़े बहस के कुछ पहलुओं का समाधान कर सकते हैं। यह भी देखा जाना है कि क्या यह मसले को हल कर सकता है या नहीं। दूसरी बात, गरीबी की गतिशील प्रकृति को देखते हुए, खासतौर पर संवेदनशील समूहों के मामले में, समय पर आंकड़े नहीं मिलने से परिणाम प्रभावित होते हैं।

अगर सर्वेक्षण समयबद्ध नहीं हुए तो वे परिवारों की आर्थिक स्थिति में बदलाव को सही ढंग से दर्ज नहीं कर पाते। इससे गरीबी के नए उभरते परिदृश्य को हल करना मुश्किल होता है। इसके अलावा बीपीएल कार्ड से कई लाभ जुड़े हैं, फिर चाहे उसे धारण करने वाला गरीब हो या नहीं। इससे भी व्यवस्थागत दिक्कत और संसाधनों का गलत आवंटन सामने आता है। भारत को अपनी संवेदनशील आबादी की जरूरतों को हल करने के लिए बेहतर व्यवस्था की आवश्यकता है। इसके लिए सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था को नए सिरे से अधिक समावेशी बनाना होगा। संबंधित कदमों में संवेदनशील समूहों से संबंधित आंकड़े जुटाना, व्यापक निगरानी रणनीति तैयार करना और जोखिम से बचाव आदि शामिल होंगे। कार्यक्रम का डिजाइन तैयार करने में लचीलापन कमजोर पहलों में सुधार लाने वाला हो सकता है जबकि रोजगार के अवसर तैयार करना भी जरूरी है। देश में समतापूर्ण और संतुलित विकास के लिए सामाजिक सुरक्षा को बदलते आर्थिक परिदृश्य के साथ तालमेल वाला बनाना अहम है।

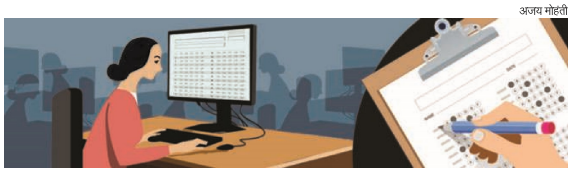

अजय मोहंती

नीट जैसी समस्याओं की गहरी हो पड़ताल

देश में नीट को लेकर मचे हो हल्ले के बीच ध्यान देने वाली बात यह है कि हमें सिर्फ तात्कालिक लक्षणों का समाधान नहीं करना चाहिए। बता रहे हैं अजय शाह और विजय केलकर

राष्ट्रीय अर्हता सह पात्रता परीक्षा (नीट) के संचालन में नाकामी ने काफी नाराजगी पैदा की है। यह सोचना संभव है कि नीट की समस्या को समझकर क्रियान्वयन में सुधार किया जाए। हमें ष्याज की तरह समस्या की परतें छीलकर गहराई में जाना होगा। देश के हर मेडिकल कॉलेज में छात्रों के दाखिले पर केंद्रीय नियंत्रण क्यों होना चाहिए? देश में चिकित्सा शिक्षा में इतनी कम सीट क्यों होनी चाहिए?

सबसे पहले तो यही लगता है कि हम परीक्षा को सही तरीके से कराने में नाकाम रहे इसलिए हमें उस व्यवस्था को सही करना होगा। हम कुछ और पुलिसकर्मियों तथा हथियारबंद वाहनों की मदद से पेपर को लीक होने से रोक सकते हैं। देश में सरकारी संस्थानों से त्रुटिरहित प्रदर्शन की उम्मीद करना समझदारी नहीं है। देश की अधिकांश नीतिगत समस्याओं की तरह हमें यहां भी बेहतर विचारों की आवश्यकता है, न कि खराब विचारों के क्रियान्वयन की। परंतु सामान्य नजरिये से बेहतर काम कैसे किया जा सकता है?

एक बेहतर केंद्रीकृत परीक्षा

सवाल यह भी है कि इतनी बड़ी देशव्यापी परीक्षा की क्या जरूरत है जिसे एक ही तिथि को आयोजित करना पड़े? विभिन्न प्रकार के विद्यार्थियों के बीच एक सा प्रश्नपत्र वितरित करके उनसे उत्तर देने को कहना उनकी गुणवत्ता को जानने का एक खराब तरीका है। 'आइटम प्रतिक्रिया सिद्धांत' पर आधारित कंप्यूटरीकृत परीक्षण प्रत्याशियों का बेहतर आकलन करता है। प्रैज़ुएट रिकॉर्ड इक्जामिनेशन इसी तरह काम करता है। अगर एक तयशुदा परीक्षा होती है तो बड़ी तादाद में लोग पूर्णांक हासिल करते हैं और उनसे कम अंक पाने वाले भी उनसे बहुत पीछे नहीं रहते। आधुनिक सांख्यिकीय पद्धतियां 95 परसेंटाइल और 99 परसेंटाइल पाने वाले बच्चों में कठिन सवालों के जरिये अंतर कर लेती हैं। इसके लिए ढेर सारे प्रश्नों का सहारा लिया जाता है जिनमें से प्रत्येक सवाल के अतीत के प्रदर्शन पर आधारित शोध एवं आकलन का विषय होता है।

इस व्यवस्था में परीक्षण पूरे वर्ष जारी रहता है और परीक्षा लेने वाला परीक्षा लेने के लिए समय देता है। इस व्यवस्था में बाढ़, गर्मी या बीमारी जैसी स्थितियों से परीक्षा न दे पाने के मामले कम होते हैं। इसका संचालन आसान है। इस व्यवस्था में 25 लाख लोगों को एक ही दिन परीक्षा नहीं देनी पड़ती है बल्कि इसे रोज 10,000 लोगों की परीक्षा के रूप में भी आजमाया जा सकता है। प्रबंधन के नजरिये से भी यह अधिक व्यावहारिक है। डेटा जारी करने, शोध, आलोचना आदि के लिए भी यही मुफीद है। साथ ही इससे यह भी सीखा जा सकता है कि कैसे साल में 250 बार रोज 10,000 लोगों की सफल परीक्षा ली जा सकती है। इसके लिए शैक्षणिक परीक्षा सेवा के स्तर पर संस्थागत क्षमता की आवश्यकता है। उसका स्तर जीआरई को कराने वाली निजी अमेरिकी कंपनी जैसा होना चाहिए। परीक्षा संबंधी गतिविधियों को सरकार के हाथों से बाहर करने के लिए नीतिगत सुधारों की आवश्यकता होगी। इससे मदद मिलेगी लेकिन क्या हम और बेहतर प्रदर्शन कर सकते हैं?

कॉलेज में दाखिले की बेहतर व्यवस्था

कोई विश्वविद्यालय कई आवेदकों में से चयन कैसे करेगा? यह विश्वविद्यालय के प्रबंधकों और बोर्ड का चयन होगा। हर विश्वविद्यालय का उद्देश्य और उसकी रणनीति छात्रों के चयन की व्यवस्था को तय करेगी। ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है जो सब पर एक समान लागू हो। कुछ विश्वविद्यालय विज्ञान, तकनीक, इंजीनियरिंग और गणित पर जोर देते हैं जबकि कुछ अन्य विभिन्न व्यक्तित्वों पर तथा अन्य लॉटरी आधारित आवंटन पर ध्यान दे सकते हैं।

यह बात हमें भारत में चकित कर सकती है लेकिन अमेरिका के डॉक्टरों का बहुत बड़ा तबका ऐसा है जिनका अतीत विज्ञान क्षेत्र में गहरा नहीं रहा है। डॉक्टरों को मजबूत संचार क्षमताओं, आलोचनात्मक सोच और समस्याओं को हल करने वाले कौशल की आवश्यकता होती है। ये गुण उदार और कला क्षेत्र की शिक्षा से उत्पन्न होते हैं। किसी चिकित्सा महाविद्यालय का समझदार नेतृत्व ही ऐसी चयन प्रक्रिया निर्धारित कर सकता है जो उसकी नीतियों के साथ तालमेल वाली हो। ऐसे में मेडिकल कॉलेज में दाखिला भारत में विभिन्न स्थितियों का एक हिस्सा मात्र है जिस पर बहुत अधिक सरकारी नियंत्रण है। केंद्र सरकार के मेडिकल दाखिले पर नियंत्रण की कोई वजह नहीं है। हर मेडिकल कॉलेज को अपनी मर्जी से दाखिला करना चाहिए। हमें केंद्र सरकार को मेडिकल दाखिलों की प्रक्रिया से बाहर करने के लिए नीतिगत सुधारों की आवश्यकता होगी। इससे मदद मिलेगी लेकिन क्या हम बेहतर प्रदर्शन कर सकते हैं?

एक बेहतर चिकित्सा शिक्षा व्यवस्था

देश में चिकित्सकों की भारी कमी है, यहां तक कि भारत के बच्चे चीन और यूक्रेन तक जाकर पढ़ाई कर रहे हैं। घरेलू जरूरतों, मेडिकल टूरिज्म और विदेशी उपयोगकर्ताओं को टेलीमेडिसन सेवाओं की आपूर्ति आदि से लगता है कि मौजूदा की तुलना में 10 से 20 गुना डॉक्टर भी हमारे देश में आसानी से खप जाएंगे। आधुनिक भारत में टेलीफोन कनेक्शन या स्कूटरों की कोई कमी नहीं है। भ्रष्टाचार जैसी समस्याओं का हल इस बात में निहित है कि नीतिगत प्रक्रिया में बेहतर क्रियान्वयन के बजाय बेहतर विचारों को पेश किया जाए। मेडिकल कॉलेज में दाखिलों से जुड़े विवादों की वजह सीटों की कमी है। यह कमी सरकारी नियमों की गलतियों की वजह से है।

देश में सॉफ्टवेयर उद्योग के उभार के बारे में विचार कीजिए जब इंजीनियरों की कमी का जोखिम था। इसे नीतिगत सुधारों की मदद से हल किया गया और निजी शैक्षणिक संस्थान सामने आए।

शिक्षा बाजार और श्रम बाजार जानते हैं कि अच्छे और बुरे कॉलेजों में कैसे भेद करना है। छात्रों या नियोक्ताओं को गलत सूचनाओं से निपटने के लिए सरकारी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। देश का निजी क्षेत्र जानता है कि शैक्षणिक संस्थानों को कैसे चलाना है, ढेर सारे प्रतिबंधों को कैसे हटाना है। सरकारी प्रतिबंधों ने देश में कई विश्वविद्यालयों को मेडिकल कॉलेज खोलने से रोक रखा है जबकि वे निजी अस्पतालों के साथ साझेदारी में ऐसा कर सकते हैं। अच्छे निजी चिकित्सालयों के लिए यह बेहतर है कि वे अपने कामकाज के साथ चिकित्सा शिक्षा को शामिल करें। एक चिकित्सा विश्वविद्यालय में ऐसे शिक्षक होने चाहिए जो केवल चिकित्सा सेवा के पेशे में नहीं हों। उन्हें शोधकर्ता भी होना चाहिए। निजी अस्पतालों के लिए यह बेहतर होगा क्योंकि इससे उनकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। इसके लिए पारंपरिक निजी अस्पतालों की तुलना में अलग तौर तरीकों की आवश्यकता होगी। सरकार की भूमिका शोध को फंड करने की व्यवस्था तैयार करना है जिसके जरिये ऐसे शोधकर्ताओं को अनुदान मिल सके।

(शाह एक्सकेडीअंर फोरम में शोधकर्ता और केलकर पुणे इंटरनैशनल सेंटर के उपाध्यक्ष हैं)

तेल और गैस पर ध्यान देने की जरूरत

दुनिया भर के देशों ने यह महसूस किया है कि प्रदूषणकारी ईंधन से स्वच्छ ऊर्जा में परिवर्तन का सफर इतना आसान नहीं है। इसका रास्ता बहुत ही टेढ़ा और मुश्किलों से भरा है। भले ही वे नए एवं स्वच्छ ऊर्जा संयंत्रों पर भारी निवेश करें, इसके बावजूद गंदे ईंधन पर उनकी निर्भरता निकट भविष्य में समाप्त होने वाली नहीं है। विशेष रूप से भारत के बारे में यह बात बिल्कुल सत्य है। भारत सबसे तेज गति से तरक्की करने वाली अर्थव्यवस्था है, लेकिन विकसित अथवा सही मायने में उच्च आय वाला देश समझे जाने से पहले इसे लंबा रास्ता तय करना है। इसकी ऊर्जा जरूरतें बहुत तेजी से बढ़ रही हैं। इसलिए आने वाले दशकों में भारत में सौर और वायु ऊर्जा क्षमता में इजाफा होगा और यहां स्वच्छ ऊर्जा भंडारण का पारिस्थितिकीय तंत्र विकसित होगा। इसी के साथ यहां प्रदूषणकारी ईंधन जैसे कोयला और हाइड्रोकार्बन (तेल और प्राकृतिक गैस) की खपत बहुत तेजी से बढ़ेगी।

तेल के मामले में भारत पहले से ही विश्व का तीसरा सबसे बड़ा आयातक और उपभोक्ता देश है। अंतरराष्ट्रीय एनर्जी एजेंसी (आईईए) का अनुमान है कि भारत में गैस और तेल की मांग वर्ष 2050 तक बढ़ती जाएगी। हालांकि इस दौरान कोयले की मांग में कुछ कमी आ सकती है। इस समय भारत अपनी जरूरत का 80 प्रतिशत से अधिक तेल और 50 प्रतिशत से ज्यादा प्राकृतिक गैस का आयात करता है। इससे बाजार में किसी भी तरह के व्यवधान या उथल-पुथल का देश और अर्थव्यवस्था पर असर साफ दिखता है। सबसे खराब बात यह है कि देश में तेल उत्पादन गिर रहा है, क्योंकि कुएं पुराने पड़ गए हैं, जिनमें से पहले के मुकाबले कम कच्चा तेल निकल रहा है। यदि नए कुओं की तलाश नहीं की गई और उनमें समय रहते उत्पादन शुरू नहीं किया गया तो अगले कुछ वर्षों में भारत में तेल उत्पादन और घट जाएगा।

ऐसा नहीं है कि भारतीय नीति निर्माता देश में घटते तेल उत्पादन और वैश्विक उथल-पुथल की स्थिति से पैदा होने वाले संभावित संकट से वाकिफ न हों, जो तेल और गैस के दाम बढ़ने की सबसे बड़ी वजह बनते हैं। रूस और यूक्रेन युद्ध के अलावा भारत को तेल के मामले में और भी दिक्कतों का सामना करना पड़ा है। भारत इस बार तो रूस-यूक्रेन युद्ध के बावजूद रूस से सस्ता तेल आयात करने में कामयाब रहा, लेकिन वैश्विक स्तर पर इस प्रकार की किसी और गड़बड़ी के चलते व्यवधान पैदा हुआ तो स्थिति उलट होगी। जब-जब वैश्विक स्तर पर कच्चे तेल और गैस के दाम बढ़ते हैं तो भारतीय नीति निर्माता ऐसे हालात से निपटने के लिए सक्रिय हो जाते हैं और तुरत-फुरत योजनाएं बनाने में जुट जाते हैं, लेकिन जैसे ही संकट टल जाता है, तेल के दाम कम करने की ये सभी योजनाएं ठंडे बस्ते में डाल दी जाती हैं।

प्रसेनजित दत्ता

संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (संप्रग) सरकार के पहले कार्यकाल में रणनीतिक भूमिगत तेल भंडारण क्षमताएं बनाने की योजना तैयार की गई थी, ताकि आपात स्थिति में उस तेल का इस्तेमाल किया जा सके। शुरुआत में इस प्रकार के कई भंडारण तैयार किए गए, लेकिन कुछ समय बाद यह परियोजना रोक दी गई और तेल भंडारण बनाने का काम बंद हो गया। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के पहले कार्यकाल में कच्चे तेल की कीमतें बहुत तेजी से गिरी थीं। उस दौरान रणनीतिक तेल भंडारण क्षमताएं विकसित करने का बहुत अच्छा मौका था, लेकिन देश ने उसे गंवा दिया।

पिछले कुछ वर्षों में भारतीय नीति निर्माताओं ने तेल और गैस पर भारत की निर्भरता कम करने की जरूरत पर बल दिया है और उन्होंने इस दिशा में पुनः कुछ कार्य शुरू किया है। यद्यपि जिस गति से नीतियां बनाने और उन्हें लागू करने का काम चल रहा है, तेल भंडारण क्षमताएं विकसित करने का लक्ष्य उससे कहीं बड़ा और महत्त्वाकांक्षी है। कच्चे तेल के रणनीतिक भंडारण बनाने की योजनाओं को दोबारा सक्रिय कर दिया गया है। सरकार ने रणनीतिक तेल भंडारण क्षमताएं बनाने और उनका संचालन करने के लिए वर्ष 2004 में इंडियन स्ट्रैटजिक पेट्रोलियम रिजर्व्स लिमिटेड (आईएसपीआरएल) जैसी विशेष एजेंसी का गठन किया था। इसने कर्नाटक के पेडूर में ऐसे ही 25 लाख टन क्षमता वाले भूमिगत तेल भंडार बनाने के लिए हाल ही में निविदाएं निकाली हैं। आईएसपीआरएल के नियंत्रण में ऐसी कुल भंडार क्षमताएं हैं, जो पहले चरण में बनाई गई थीं, लेकिन मौजूदा और भविष्य की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए एजेंसी और भंडारण क्षमताएं बना रही है।

शायद सबसे जरूरी यह बात है कि प्रधानमंत्री मोदी के दूसरे कार्यकाल में नए तेल क्षेत्र खोजने की दिशा में काम किया गया। सरकार ने 1997 में बनी नई अन्वेषण लाइसेंसिंग नीति (एनईएलपी) की जगह वर्ष 2015 और 2016 में हाइड्रोकार्बन अन्वेषण और लाइसेंसिंग नीति (एचईएलपी) और ओपन एकरेज लाइसेंसिंग नीति (ओएएलपी) की घोषणा की थी। इससे सरकार को उम्मीद थी कि नीतियों में सुधार होने से इस क्षेत्र में नए निवेशक विशेष रूप से वैश्विक खिलाड़ी उतरेंगे। दुर्भाग्य से वैश्विक स्तर पर बड़ी तेल कंपनियों ने भारत के तेल कुओं में निवेश के लिए अधिक रुचि नहीं दिखाई। इसकी अपेक्षा उन्होंने विश्व भर में कम जोखिम वाले तेल भंडारों पर फोकस किया।

वैश्विक स्तर की ऐसी तेल कंपनियां, जिन्होंने भारतीय तेल कुओं में कुछ रुचि दिखाई थी, उन्होंने भी कम जोखिम का रास्ता चुना और सार्वजनिक क्षेत्र की ओएनजीसी एवं ओआईएल और निजी क्षेत्र की रिलायंस जैसी कंपनियों के साथ साझेदारी में काम आगे बढ़ाया। जिन कंपनियों ने अपने स्तर पर बोली लगाने का रास्ता चुना था, वे धीरे-धीरे मैदान छोड़ कर भारत से बाहर निकल गईं।

निजी बातचीत में वैश्विक तेल निवेशक इस बात की शिकायत करते हैं कि भारत के तेल क्षेत्र में जोखिम की तुलना में संभावित लाभ बहुत कम है। यह बात ठीक है कि एनईएलपी की अपेक्षा एचईएलपी और ओएलएपी आने से बहुत अधिक सुधार हुआ है। कुछ अन्य निवेशक लाल फीताशाही और अनिश्चित कर व्यवस्थाओं के बारे में शिकायत करते हैं। उदाहरण के लिए भारत सरकार के राजस्व में बड़ा योगदान देने वाले अप्रत्याशित लाभ कर भी निवेशकों को बड़ा झटका देते हैं। निवेशक यह नहीं समझ पाते कि आखिर जोखिम लेने के बाद वे अतिरिक्त कर का भुगतान क्यों करें।

भारतीय कंपनियां विशेष तौर पर सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियां आने वाले कुछ वर्षों में तेल और गैस क्षेत्र में भारी-भरकम निवेश की योजना बना रही हैं, लेकिन यह निवेश भी पर्याप्त नहीं होगा। भारत को इस क्षेत्र में घरेलू और वैश्विक दोनों मोर्चों पर और अधिक निजी निवेश लाने की आवश्यकता है।

नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली केंद्र सरकार ने इस बात के स्पष्ट संकेत दिए हैं कि वह इस रणनीतिक क्षेत्र में निवेश को आकर्षित करने के लिए विशेष उत्पादन प्रोत्साहन की योजना ला सकती है। देश के लिए तेल और गैस क्षेत्र के रणनीतिक महत्त्व को देखते हुए सरकार अपनी नीतियों और प्रोत्साहन योजनाओं में सुधार के रास्ते निकाल सकती है, ताकि अधिक से अधिक निजी कंपनियां इस क्षेत्र में निवेश करें। यदि ऐसा नहीं होता है तो तेल और गैस आयात को कम करने के लक्ष्य केवल कागजों तक ही सिमट कर रह जाएंगे।

(लेखक बिज़नेस टुडे एवं बिज़नेस वर्ल्ड के पूर्व संपादक तथा संपादकीय सलाहकार कंपनी प्रोजैक व्यू के संस्थापक हैं)

आपका पक्ष

मानव पूंजी निर्माण के लिए ठोस वैश्विक प्रयास जरूरी

एक कुशल और शिक्षित श्रम बल ही देश को उच्च विकास दर की ओर ले जाता है। कौशल और शिक्षा ऐसे क्षेत्र हैं जहां निवेश के कई प्रभाव होते हैं। जब कार्य बल अधिक कुशल बनेगा तब आर्थिक विकास की गति को बल मिलेगा। दरअसल, सरकारों ने लंबे समय से भौतिक पूंजी - सड़क, पुल, हवाई अड्डे और अन्य बुनियादी ढांचे पर ध्यान केंद्रित करके आर्थिक विकास में निवेश किया है। लेकिन उन्होंने अक्सर अपने लोगों में कम निवेश किया है। इसलिए लाभ बहुत धीमे रहे हैं और उन्हें मापना कठिन रहा है। इसलिए आज दुनिया 'मानव पूंजी कमी' का सामना कर रही है। कई देशों में कार्यबल तेजी से सामने आ रहे भविष्य के लिए तैयार नहीं है। दूसरी ओर कौशल की सीमा पहले से कहीं अधिक तेजी से आगे बढ़ रही है। भारत को अब अपने कार्यबल को प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों से उत्पन्न होने वाली भारी चुनौतियों और अवसरों के लिए कमर कसने की जरूरत है। लेकिन मानव पूंजी निर्माण के लिए तत्काल और ठोस वैश्विक प्रयासों के बिना बड़ी संख्या में लोगों और पूरे देश के भविष्य की समृद्धि से वंचित होने का खतरा है। कोई भी देश अपनी मानव पूंजी में कम निवेश करने का जोखिम नहीं उठा सकता। देश की मानव पूंजी को भी एक ऐसे विश्व की ओर प्रगति करनी चाहिए जिसमें सभी बच्चे सुपोषित होकर और सीखने के लिए तैयार होकर स्कूल पहुंचें, कक्षा में वास्तविक शिक्षा पाने की आशा कर सकें और स्वस्थ, कुशल और उत्पादक वयस्क के रूप में नौकरी के बाजार में प्रवेश कर सकें।

सुधीर कुमार सोमानी, देवास

भारत को अपने कार्यबल को प्रौद्योगिकीय परिवर्तनों से उत्पन्न होने वाली चुनौतियों और अवसरों के लिए तैयार करने की जरूरत है

अनियंत्रित निर्माण पर लगे अंकुश

बारिश से होने वाली तबाही रोकने के लिए अनियंत्रित निर्माण कार्यों को नियंत्रण में लाना होगा क्योंकि इससे प्रकृति के नियम टूटते हैं और तबाही आती है। पेड़ों के संवर्धन और संरक्षण के लिए फोटोग्राफी की परंपरा के बजाय कानूनी रूप से गांव, नगर निकाय, जिला तथा राज्यवार लक्ष्यों का निर्धारण कर उनको पूरा करने का प्रयास किया जाना चाहिए। नदियों, नालों के प्रवाह क्षेत्रों की जांच सतत रूप से होनी चाहिए। केंद्र सरकार को भी पर्यावरण संरक्षित करने वाले राज्यों और क्षेत्रों के लिए विशेष वित्तीय प्रोत्साहन देना चाहिए।

कृष्ण चंद्र त्रिपाठी, रीवा

प्लास्टिक बैग हानिकारक

प्लास्टिक से पर्यावरण को भारी नुकसान होता है। यह बारिश के पानी को धरती के नीचे जाने से रोकता है। कुछ लोग प्लास्टिक को जलाते हैं। इससे जहरीला धुआं निकलता है। सीवरेज में भी लोग प्लास्टिक की थैलियां फेंक देते हैं जिससे सीवरेज और नालियां जाम हो जाती हैं। हमारे देश में प्लास्टिक कचरा बढ़ता जा रहा है। कूड़े के ढेर में सबसे ज्यादा प्लास्टिक थैलियां ही नजर आती हैं। हिमाचल में प्रदेश में प्लास्टिक थैलियों पर प्रतिबंध लगाया गया है। लेकिन पर्यटकों का प्लास्टिक की थैलियां लाना प्रदेश की प्रकृति संपदा के लिए उचित नहीं है। सभी राज्यों को प्लास्टिक थैलियां बंद कर देनी चाहिए।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफ़र मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

विदेश मंत्री एस जयशंकर ने गुरुवार को नई दिल्ली में बिम्सटेक के दो दिवसीय सम्मेलन में भूटान के विदेश मंत्री डीएन धुंग्येल की अगवानी की। बिम्सटेक में भारत के अलावा श्रीलंका, बांग्लादेश, म्यांमार, थाईलैंड, नेपाल और भूटान हैं। जयशंकर ने बिम्सटेक समूह से बंगाल की खाड़ी के देशों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने के लिए नई ऊर्जा, संसाधन और नई प्रतिबद्धता का आह्वान किया।

दैनिक जागरण
कोई भी संकल्प मनुष्य के साहस की परिधि से परे नहीं

रोजगार का प्रश्न

भाजपा की ओर से केवल यह कहना ही पर्याप्त नहीं कि राहुल गांधी और अन्य विपक्षी नेताओं की ओर से बेरोजगारी पर झूठ फैलाया जा रहा है। इसके साथ ही यह भी आवश्यक है कि भाजपा और उसकी केंद्र और राज्य सरकारों की ओर से इस विमर्श की प्रभावी ढंग से काट की जाए कि रोजगार के मोर्चे पर संकट गहरा रहा है। भाजपा और उसकी सरकारों को इस धारणा को भी ध्वस्त करना होगा कि रोजगार का मतलब सरकारी नौकरी होता है। इसके अतिरिक्त इस पर भी ध्यान देना होगा कि जब अन्य देशों की तुलना में देश में नौकरियों के अवसर बढ़ रहे हैं, तब फिर विपक्ष यह माहौल बनाने में क्यों सक्षम है कि रोजगार के मोर्चे पर स्थिति चिंताजनक है? आखिर जब स्टेट बैंक आफ इंडिया का एक अध्ययन यह कहता है कि मनमोहन सरकार के दस वर्ष के कार्यकाल की तुलना में मोदी सरकार के शासनकाल में कहीं अधिक नौकरियों का सृजन हुआ, तब फिर विपक्ष उलटी तस्वीर पेश करने में क्यों समर्थ है? यदि विपक्ष सरकार के खिलाफ माहौल बनाने के लिए झूठ का सहारा लेने के साथ ही बेरोजगारी संबंधी आंकड़ों की मनमानी व्याख्या कर रहा है, जो स्पष्ट रूप से दिख भी रहा है तो इसमें कहीं न कहीं सरकार की भी कमजोरी झलकती है। इसका अर्थ है कि वह अपनी बात सही से लोगों तक नहीं पहुंचा पा रही है।

अभी हाल में रिजर्व बैंक ने यह स्पष्ट किया कि वित्त वर्ष 2023-24 के दौरान 4.67 करोड़ नौकरियां बढ़ीं। रिजर्व बैंक ने यह भी बताया कि बीते वित्त वर्ष तक देश में कुल नौकरियां बढ़कर 64.3 करोड़ हो गईं। इसका अर्थ है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था की सुस्ती और उसका प्रभाव भारत में पड़ने के बावजूद देश में रोजगार के अवसर बढ़ रहे हैं। इससे इन्कार नहीं कि रोजगार के और अधिक अवसर पैदा करने की आवश्यकता है और उसकी पूर्ति सरकार को निजी क्षेत्र के साथ मिलकर करनी होगी, लेकिन इसके साथ ही उसे उस धारणा को भी तोड़ने का काम करना होगा, जिसके तहत रोजगार का मतलब सरकारी नौकरियां समझा जाता है। अपने देश में सरकारी नौकरियों के प्रति जैसा जबरदस्त आकर्षण है, वैसा अन्य विकासशील एवं विकसित देशों में कम ही देखने को मिलता है। सरकारी नौकरियों के प्रति आकर्षण का एक बड़ा कारण नौकरी की गारंटी और जवाबदेही से मुक्ति का भाव भी है। एक अन्य कारण यह आम धारणा भी है कि सरकारी नौकरियां अति सुरक्षित होने के साथ ही आरामतलबी का पर्याय होती हैं। इस धारणा को जितनी जल्दी दूर किया जाए, उतना ही अच्छा। इसमें सफलता तभी मिलेगी, जब सरकारी नौकरियों को कार्यकुशलता का पर्याय बनाने के साथ सरकारी कर्मचारियों को जवाबदेह बनाया जाएगा। सरकारी कर्मचारियों में यह भाव जगाना ही होगा कि यदि वे अपना काम सही तरह नहीं करेंगे तो उनकी नौकरी खतरे में पड़ सकती है।

बड़ी राहत

पंजाब एवं हरियाणा हाई कोर्ट ने शंभू बार्डर खोलने का आदेश देकर बड़े वर्ग को बड़ी राहत प्रदान की है। अब हरियाणा सरकार को एक सप्ताह के भीतर सभी बैरिकेड्स हटाकर शंभू बार्डर को पूरी तरह खोलना होगा। फरवरी से ही यह बार्डर बंद है। इससे आसपास के गांवों के लोगों का परेशान होना स्वाभाविक है। उनके कामकाज, उद्योग-धंधे, बच्चों की शिक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। बार्डर बंद होने से पंजाब में उद्योग एवं व्यापार को भारी क्षति उठानी पड़ी। एक समय ऐसा भी आया जब किसान संगठनों की तरफ से रेलवे ट्रैक भी अवरुद्ध कर दिया गया था। शंभू बार्डर और रेलवे ट्रैक बंद होने के बाद पंजाब में व्यापारियों ने कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त की थी। इसके बाद किसान संगठनों की तरफ से रेलवे ट्रैक से धरना हटा लिया गया था। अब आशा की जानी चाहिए कि शीघ्र ही शंभू बार्डर को खोल दिया जाएगा। इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता है कि यदि इस मामले की सुनवाई और पहले हुई होती तो बार्डर बंद होने से जो क्षति हुई है उसे रोका अथवा कम किया जा सकता था। हाई कोर्ट ने बार्डर खोलने के साथ ही हरियाणा और पंजाब सरकार को कानून व्यवस्था बनाए रखने के आदेश भी दिए हैं। साथ ही किसानों को कानून का उल्लंघन न करने की नसीहत देकर उचित ही किया है। अपेक्षा है कि सभी पक्ष शांतिपूर्ण ढंग से हाई कोर्ट के आदेश का पालन करेंगे और बाधाएं दूर कर ली जाएंगी। इसके साथ ही सरकार और किसानों को उचित मंच पर बातचीत के माध्यम से गतिरोध को समाप्त कर सर्वमान्य हल की तरफ बढ़ना चाहिए।

पंजाब एवं हरियाणा हाई कोर्ट ने बार्डर खोलने के साथ ही हरियाणा और पंजाब सरकार को कानून व्यवस्था बनाए रखने के आदेश भी दिए हैं

चुनौतियों के लिए कितनी तैयार है सरकार

डा. एके वर्मा

यदि नए कार्यकाल में मोदी सरकार चुनौतियों से निपट सकी तो जहां शासन सुचारु रूप से चलेगा, वहीं जनमानस में लोकतंत्र के प्रति आस्था भी दृढ़ होगी

संविधान के संरक्षक होने का दावा-दिखावा करने वाले विपक्षी दलों के सदस्यों का लोकसभा की कार्यवाही के दौरान व्यवहार भारतीय लोकतांत्रिक परंपरा के अनुरूप नहीं रहा। संविधान की प्रति लेकर संसद में प्रवेश, प्रोटेम स्पीकर के चयन से लेकर स्पीकर के चुनाव को लेकर गतिरोध, राष्ट्रपति के अभिभाषण पर बहस का निम्न स्तर, नियम विरुद्ध स्थगन प्रस्ताव की मांग और सदन से बहिर्गमन ऐसा ही आचरण रहा। नेता-प्रतिपक्ष के रूप में राहुल गांधी की हिंदू समाज पर अवांछित टिप्पणियां भी उचित नहीं कही जा सकतीं। राजनीतिक संस्कृति में पतन के चलते न तो विपक्ष रचनात्मक विरोध और स्वस्थ आलोचना कर रहा है और न ही सत्तारूढ़ दल विपक्ष का सहयोग ले रहा है। इससे देश की युवा पीढ़ी लोकतंत्र के बारे में क्या धारणा बना रही है? गांधी जी ने कहा था 'प्रबुद्ध और अनुशासित लोकतंत्र विश्व में सर्वोत्तम चीज है।' क्या सत्ता पक्ष और विपक्ष से अपेक्षा की जा सकती है कि वे अपने कार्य, कथन और चिंतन में बौद्धिकता एवं अनुशासन का प्रदर्शन कर युवा पीढ़ी की लोकतंत्र में आस्था को दृढ़ कर सकेंगे?

यदि युवाओं की लोकतंत्र में आस्था न रही तो संविधान का कोई अर्थ नहीं। इसमें सत्ता पक्ष की पहल करनी होगी, लेकिन तीसरे कार्यकाल में मोदी सरकार के समक्ष चुनौतियां कम नहीं हैं। सरकार की पहली चुनौती संसदीय विपक्ष है, जिसका लक्ष्य होगा कि घटक दलों पर निर्भर मोदी सरकार को अस्थिर करना। इसके लिए वे तेदेपा और जदयू को ढाल बनाकर सरकार पर प्रहार करते रहेंगे। वहीं, प्रधानमंत्री मोदी के सामने सहयोगी दलों को साथ रखने और नए सहयोगी तलाशने की चुनौती रहेगी। चुनाव परिणामों के बाद से विपक्ष विशेषकर कांग्रेसी ऐसा व्यवहार कर रहे हैं, जैसे असली विजेता वही हों और मोदी पराजित हुए हों। विपक्षी नेताओं ने प्रधानमंत्री मोदी के शपथ ग्रहण समारोह का बहिष्कार कर और तीसरी बार प्रधानमंत्री बनकर इतिहास रचने पर उन्हें बधाई न देकर सामान्य शिष्टाचार का भी उल्लंघन किया। ऐसे विपक्ष से सरकार क्या संसदीय कार्यों में सहयोग की अपेक्षा कर सकती है? बजट सत्र में यदि विपक्ष केवल शोर-शराबे, धरना-प्रदर्शन और नारेबाजी में ही व्यस्त रहा तो नीतिगत विमर्श एवं निर्णय कैसे होंगे? सरकार से भी हठधर्मिता छोड़ विपक्ष को विश्वास में लेने और उनसे नियमित संवाद की अपेक्षा रहेगी, जिससे विपक्ष को भी लगे कि नीति निर्णय प्रक्रिया में उसकी भी सहभागिता है।

दूसरी चुनौती भाजपा को सहयोगी दलों से तालमेल बनाने की होगी। खासतौर से

आशीष त्रिपाठी

जदयू और तेदेपा से, क्योंकि उनके बिना बहुमत की स्थिति प्रभावित होगी। भाजपा ने बिहार में नीतीश, चिराग पासवान और जीतनराम मांझी को मिलाकर एक बड़े सामाजिक वर्ग को साधा। आंध्र में चंद्रबाबू नायडू ने तेदेपा-जनसेना-भाजपा गठबंधन ने मुद्दों पर चुनाव लड़कर 'कामा, कापू और रेड्डी' समाज के सही समीकरण बनाए। इसके आसार अधिक हैं कि विशेष राज्य का दर्जा और विकास हेतु वित्तीय सहयोग आदि मांगों पर तेदेपा, जदयू तथा भाजपा के संबंधों में समस्या नहीं आएगी। इसमें प्रधानमंत्री मोदी का सकारात्मक दृष्टिकोण महत्वपूर्ण है। वह स्वयं गुजरात के मुख्यमंत्री रहे हैं और राज्यों के प्रति संवेदनशील हैं। नीतीश और नायडू की विकासोन्मुख मांगें मोदी के विकसित भारत की परिकल्पना का अभिन्न अंग हैं। इसलिए उन मांगों पर प्रधानमंत्री को समस्या नहीं होगी।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से मधुर संबंध बनाए रखना भी मोदी सरकार की एक चुनौती होगी। भाजपा और संघ भले ही कहें कि उनके बीच सब कुछ सहज है, लेकिन ऐसा लगता नहीं। यदि सब कुछ सहज होता तो चुनाव प्रचार के दौरान पार्टी अध्यक्ष जेपी नड्डा को क्यों कहना पड़ता कि अब भाजपा को आरएसएस की जरूरत नहीं। इससे स्वयंसेवकों में गलत संदेश गया। संघ के कार्यकर्ता निष्ठापूर्वक भाजपा के पक्ष में जनमत तैयार करते हैं और मतदाताओं को मतदान केंद्रों तक ले जाते रहे हैं। नड्डा के बयान से उत्तर प्रदेश, बंगाल और महाराष्ट्र आदि राज्यों में वे उदासीन हो गए, जिससे भाजपा को नुकसान हुआ। जल्द ही कुछ महत्वपूर्ण राज्यों में विधानसभा चुनाव होने हैं और बिना संघ के सक्रिय सहयोग के भाजपा के प्रदर्शन पर प्रश्न चिह्न लगा रहेगा।

मोदी सरकार के इस कार्यकाल की एक चुनौती स्वयं भाजपा से है। समावेशी राजनीति के कारण मोदी ने समाज के सभी वर्गों और जातियों की पार्टी की ओर आकृष्ट किया। इससे अस्मिता की राजनीति करने वाले भी आज भाजपा में हैं। इसके चलते न केवल कुछ पुराने भाजपाई नाराज हैं, बल्कि पार्टी में गुटबाजी भी बढ़ी है। भाजपा में नव-प्रवेशार्थियों का भाजपा की विचारधारा से जुड़ाव हो भी सकता है और नहीं भी, लेकिन पुराने भाजपाई यही समझते हैं कि वे अपने निहित स्वार्थों के लिए ही पार्टी से जुड़े हैं। विचारधारा से इतर अन्य आधारों पर भी लोग आज भाजपा से जुड़े हैं और स्वार्थ-सिद्धि न होने पर वे पार्टी छोड़ सकते हैं। ऐसे में प्रधानमंत्री अपने दायित्वों के निर्वहन में इतने तल्लीन नहीं हो सकते कि अपने सांसदों और विधायकों की अकर्मण्यता और गुटबाजी से लेकर जनता से विमुखता और भ्रष्टाचार में लिप्तता का संज्ञान न लें।

गैर-भाजपा, गैर-राजग शासित राज्यों से मधुर संबंध बनाना सरकार की पांचवीं चुनौती है। जिस आक्रामक संघवाद की शुरुआत बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने की, उसकी बेल पंजाब, तेलंगाना, केरल, तमिलनाडु और कर्नाटक आदि राज्यों तक पहुंच गई है। केंद्र सरकार को आंतरिक और बाह्य तमाम समस्याओं से जूझना पड़ता है। कानून-व्यवस्था, आतंकवाद और सुरक्षा जैसी संवेदनशील समस्याओं का समाधान निकालना पड़ता है। दैवीय और प्राकृतिक आपदाओं से निपटना पड़ता है। तकनीक जनित नए प्रकार के अपराधों की काट खोजनी पड़ती है। अतः मोदी सरकार को सभी राज्यों से तालमेल बैठाकर ही शासन चलाना होगा। यदि इन पांचों राजनीतिक चुनौतियों से मोदी सरकार निपट सकी तो न केवल आगामी पांच वर्षों तक शासन सुचारु रूप से चलेगा, बल्कि इससे जनमानस में लोकतंत्र के प्रति आस्था भी दृढ़ होगी।

(लेखक सेंटर फार द स्टडी आफ सोसायटी एंड पालिटिक्स के निदेशक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

पूर्वाग्रह से ग्रस्त पश्चिमी मीडिया

संजय द्विवेदी

अब यह और स्पष्ट है कि पश्चिमी मीडिया को मोदी के नेतृत्व में भारत का बढ़ता कद रास नहीं आ रहा है

नकारात्मकता से भरा पश्चिमी मीडिया। फाइल

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की रूस यात्रा के बाद पश्चिमी मीडिया का एक बड़ा हिस्सा उनके और साथ ही भारत के प्रति हमलावर हो गया है। वह रूसी राष्ट्रपति पुतिन से भारतीय प्रधानमंत्री की मुलाकात और उनसे गले मिलने को लेकर उनकी आलोचना करने में जुट गया है। दरअसल कुछ पश्चिमी देशों की तरह उनका मीडिया भी भारत की अमेरिका के पाले में लाने के लिए अतिरिक्त जतन कर रहा है। पश्चिमी मीडिया का एक बड़ा हिस्सा मोदी के प्रति तभी से पूर्वाग्रह से ग्रस्त है, जबसे वह पहली बार 2014 में प्रधानमंत्री बने। हालांकि नरेन्द्र मोदी के अपने दौनों कार्यकाल में पश्चिमी नेताओं के साथ अब तक के सबसे अच्छे संबंध रहे हैं, लेकिन पश्चिमी मीडिया के साथ ऐसा नहीं है। वह उन्हें 'तानाशाह' से लेकर 'तानाशाह' तक कई तरह के शब्दों से संबोधित करता है। अब जब मोदी एक बार फिर प्रधानमंत्री बन गए हैं, तब पश्चिमी मीडिया द्वारा फैलाए गए भारत-विरोधी और मोदी-विरोधी एजेंडे का मूल्यांकन करना जरूरी हो जाता है। भारत ने लोकसभा चुनावों के दौरान विदेशी पर्यवेक्षकों को चुनावी प्रक्रिया देखने के लिए आमंत्रित किया था, लेकिन पश्चिमी मीडिया ने मोदी सरकार पर अल्पसंख्यकों के प्रति 'घृणा' से भरे 'हिंदुत्व' के एजेंडे को आगे बढ़ाने का अपना रवइ जारी रखा।

पत्रकारिता का नियम है कि संतुलित रिपोर्टिंग में सभी पक्षों के तथ्य और सभी पक्षों के बयानों को समान रूप से प्रस्तुत किया जाए, लेकिन पश्चिमी मीडिया ने पूरे परिदृश्य को बिकृत किया और बिना किसी पर्याप्त संदर्भ और दूसरे पक्ष के किसी भी दृष्टिकोण को शामिल किए पक्षपातपूर्ण और एकतरफा नैरेटिव बनाए रखा। उसने भारतीय चुनावों को कवर करते हुए प्रधानमंत्री मोदी के खिलाफ योजनाबद्ध तरीके से रिपोर्ट प्रकाशित की। चुनाव के दौरान ब्रिटिश दैनिक समाचार पत्र द गार्डियन में प्रकाशित लेखों के कुछ शीर्षक देखें- 'भारत में चुनाव पूरे जोरों पर, नरेन्द्र मोदी हताश और खतरनाक होते जा रहे हैं', 'नरेन्द्र मोदी बने नफरत के सौदागर।' अत्यधिक पूर्वाग्रह से ग्रस्त ये शीर्षक किसी सनसनीखेज ब्लिटर या बेतरतीब की पंचलाइन के रूप में अधिक उपयुक्त लगते थे। इनमें से 'भारत में चुनाव पूरे जोरों पर, नरेन्द्र मोदी हताश और खतरनाक होते जा रहे' शीर्षक से प्रकाशित लेख 2002 के गोधरा दंगों के लिए भारतीय प्रधानमंत्री को दोषी ठहराने से शुरू होता है और उन्हें अपराधी के रूप में चित्रित करता था, लेकिन लिखने वाले ने यह उल्लेख नहीं किया कि मोदी को गोधरा दंगों के मामले में सुप्रीम कोर्ट द्वारा सभी आरोपों से बहुत पहले ही बरी कर दिया गया था। जाहिर है, लेखक यह सब इसलिए नहीं बताता, क्योंकि यह उसकी शातिर कथा के अनुकूल नहीं था।

लोकसभा चुनाव के दौरान जर्मन ब्राडकास्टर 'डायचे वेले' ने भी 'क्या भारत का चुनाव आयोग मोदी के खिलाफ शक्तिहीन है?' नामक शीर्षक से एक लेख प्रकाशित किया। उसमें मोदी के भाषण को सनसनीखेज बनाने की कोशिश करते हुए कहा गया कि उनके शब्द इस्लामोफोबिया में डूबे हुए हैं। लेख में सुविधाजनक रूप से उस संदर्भ को छोड़ दिया गया, जिसमें मोदी ने टिप्पणी की थी कि पंथ-मजहब के आधार पर आरक्षण प्रदान करना भारतीय संविधान की भावना और प्रविधानों के विरुद्ध है। लेख में भारत के चुनाव आयोग को भी एक 'निष्क्रिय दर्शक' कहा गया। चुनाव आयोग के खिलाफ चुनावों के बीच में बिना किसी सुबूत के और अज्ञात स्रोतों द्वारा दिए गए सामान्यीकृत बयानों के आधार पर आरोप लगाना क्या बाकई में पत्रकारिता है? लगता है यह भारत के लोगों के सोच को प्रभावित करने और भारत के आंतरिक मामलों में दखल देने का एक बहुत ही सूक्ष्म प्रयास था। फाइनेंशियल टाइम्स ने लिखा था, 'लोकतंत्र की जननी की हालत अच्छी नहीं।' न्यूयार्क टाइम्स ने तो 'मोदी को झूठ का मंदिर' बताया, जबकि फ्रांस के प्रमुख अखबार ले मांद ने लिखा, 'भारत में केवल नाम का लोकतंत्र है।' अमेरिकी न्यूज चैनल 'फाक्स' ने लिखा, 'अयोध्या में अल्पसंख्यकों को लगातार डराया जा रहा है।' सीएनबीसी ने चुनाव को लोकतंत्र के लिए खतरा बताया था, वहीं सीबीएस टेलीविजन नेटवर्क ने मोदी के चुनाव प्रचार को अल्पसंख्यक विरोधी बताया, पर इनमें से एक ने भी महिलाओं के खिलाफ भयानक संदेशखाली हिंसा या टीएमसी के लोगों द्वारा भाजपा कार्यकर्ताओं की बेरहमी से हत्या या भाजपा की नुपुर शर्मा की टिप्पणियों का समर्थन करने के लिए कन्हैयालाल की बेरहमी से हत्या जैसे मुद्दों पर बात नहीं की।

पश्चिमी मीडिया का मोदीफोबिया अंतहीन है। लगता है पश्चिम के प्रमुख अंतरराष्ट्रीय प्रकाशनों का मकसद मोदी और साथ ही भारत की छवि को बिगाड़ना है। वे लगातार भारत के खिलाफ नकारात्मक एजेंडा चलाते रहते हैं। कोविड के समय भी पश्चिमी मीडिया ने भारत की बदनाम करने का अभियान छेड़ दिया था, जबकि तब कई पश्चिमी देशों की स्थिति कहीं अधिक खराब थी। मोदी के फिर से प्रधानमंत्री बन जाने पर पश्चिमी मीडिया हताश-निराश और नाराज दिख रहा है। इसी कारण वह यह साबित करने में जुट गया है कि मोदी कमजोर प्रधानमंत्री हैं। कुछ तो उन्हें चुनाव हारा हुआ बता रहे हैं। अब स्पष्ट है पश्चिमी मीडिया को मोदी के नेतृत्व में भारत का बढ़ता कद रास नहीं आ रहा है। यह एक तथ्य है कि पश्चिमी देशों की एक लाबी और वहां के मीडिया का एक हिस्सा भारत की आर्थिक प्रगति को स्वीकार नहीं कर पा रहा है। इसलिए उसकी ओर से हर स्तर पर भारत को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बदनाम करने के प्रयास किए जाते रहते हैं। लगता नहीं कि यह सिलसिला थमेगा।

(लेखक भारतीय जन संचार संस्थान के पूर्व महानिदेशक हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

उचित फैसला

किसी को भी घमंड नहीं करना चाहिए। अगर घमंड रखना ही है तो यह घमंड करें कि मैं परमपुरुष की संतान हूं। संसार में जितनी भी संपदा है, उसके कारण परमपुरुष हैं और मैं उस ईश्वर की संतति। फिर किसी भी तरह की कुंठा नहीं रहेगी। मन फल लदे वृक्ष की तरह झुका रहेगा।

परमपिता में आस्था रखने वाले भेदभाव को भी नहीं मानते। जब भेदभाव जैसी बात होगी ही नहीं, तो कुंठा कहां से आएगी। मनुष्य में एक और कुंठा रहती है-मैं पापी हूं, मैंने यह पाप किया है। परमपिता मुझे मेरे पाप की सजा देंगे। ऐसी कुंठा हम क्यों पालें, जब हम परमपिता की संतान हैं। पाप-पुण्य तो इस जगत की चीज है और जैसे ही अपनी गलती का अहसास होता है हम उसमें सुधार करना शुरू कर देते हैं। गलती का अहसास न होने को ही पाप समझना चाहिए। गलती का अहसास होने का मतलब है कि उसका परिमार्जन संभव है। जैसे-एक छोटा बच्चा है। वह साफ वस्त्र पहना हुआ है। वह देखने में अच्छा लग रहा है। उसके पिता उसे गोद में उठा लेंगे। प्यार करेंगे, तो उस बच्चे के शरीर पर जो सुंदर वस्त्र है, क्या वह उसका अंश है? वह तो बाहर से जोड़ा गया है। वहीं एक दूसरा बच्चा सड़क पर चलते-चलते नाली में गिर जाता है। हाथ-पैर में कीचड़ लग जाता है। बच्चे को कीचड़ में लिपटा देखकर कोई अन्य घृणा कर सकता है, पर क्या उसका पिता उससे घृणा करेगा? बिल्कुल नहीं। वह उसे झट उठाएगा, पोंछेगा, रोते हुए बच्चे को चुप कराएगा।

इसी तरह से पाप और पुण्य दुनिया के लिए है, परमपिता के लिए नहीं। इसलिए मन में कभी किसी तरह की कुंठा नहीं रखनी चाहिए। यह नहीं सोचना चाहिए कि परमपुरुष के सामने कैसे खड़ा होऊंगा। मैंने गलती की है। यह तो लाज की बात है, पर याद रखने वाली बात यह है कि लाज एक पाश है। एक बंधन है। इस बंधन से लड़ाई का मतलब है, परमपुरुष के समीप जाना।

श्री श्री आनंदमूर्ति

शिक्षा से अधिक शादी पर खर्च

रंजना मिश्रा

दिखावे और प्रतिस्पर्धा की होड़ में लोग खर्चों की कोई सीमा नहीं रखते और अपनी क्षमता से अधिक खर्च करते हैं

हाल में एक खबर आई कि भारत के लोग शिक्षा की तुलना में विवाह पर लगभग दो गुना खर्च करते हैं। भारतीय विवाह उद्योग का मूल्य लगभग 10.7 लाख करोड़ रुपये है, जो इसे खाद्य और किराने के सामान के बाद दूसरा सबसे बड़ा उद्योग बनाता है। एक भारतीय विवाह पर लगभग 12.5 लाख रुपये का खर्च होता है, जो किसी व्यक्ति की स्नातक तक की शिक्षा पर होने वाले खर्च का लगभग दोगुना है। भारतीय संस्कृति में शादियों का विशेष महत्व है। यह केवल दो व्यक्तियों का मिलन ही नहीं, बल्कि दो परिवारों का संगम और सामाजिक रीति-रिवाजों का उत्सव मनाने का अवसर भी होता है। पिछले कुछ दशकों में इन शादियों का खर्च आसमान छूने लगा है, जो बड़ी चिंता का विषय बनता जा रहा है।

दरअसल भव्य शादी परिवार की शान और समृद्धि का प्रदर्शन करने का तरीका बन गई है। दिखावे और प्रतिस्पर्धा की होड़ में लोग खर्चों की कोई सीमा नहीं रखते और अपनी क्षमता से अधिक खर्च करते हैं। महंगे कपड़े, आभूषण, एक से एक महंगे पकवान और भव्य सजावट, आज हर शादी का हिस्सा बन गए हैं। भारतीय समाज में शादी को जीवन का खास मौका माना जाता है। इसलिए माता-पिता अपने बच्चों के लिए इसे बेहतर बनाना चाहते हैं। भावी दूल्हा और दुल्हन के मन में भी अपनी शादी को यादगार बनाने की प्रबल इच्छा रहती है। इस वजह से वे भी शादी से संबंधित खरीदारी करने और सजने संवरने में खुले हाथों पैसे खर्च करते हैं। शादी में दिया जाने वाला दहेज लड़की के माता-पिता पर खर्च का और अधिक बोझ बढ़ा देता है। वैसे तो दहेज कानूनन अपराध है, लेकिन अभी भी कई भारतीय परिवारों में यह प्रचलित है। जिन परिवारों के पास अधिक पैसा है, वे तो अपनी बेटी की अधिक से अधिक सामानों और उपहारों के साथ विदा करते हैं, लेकिन इसका दुष्प्रभाव उन गरीब परिवारों पर पड़ता है, जिनके पास पैसा नहीं है। फिर भी उन्हें समाज की देखा देखी कर्ज लेकर भी उपहार देने पड़ते हैं।

शादी में होने वाले खर्च की वजह से कई परिवार बेटियों की शिक्षा पर अधिक ध्यान नहीं देते, क्योंकि बेटी के जन्म के साथ ही वे शादी के लिए बचत करना शुरू कर देते हैं। विवाह एक खुशी का अवसर है, इसे बोझ नहीं बनने देना चाहिए। शादियों को खुशहाल और टिकाऊ बनाने के लिए लोगों को अनावश्यक खर्चों और दिखावे के नुकसान के बारे में जागरूक करना जरूरी है। हमें अपना सोच बदलना होगा और शादियों को सादगी से मनाने पर जोर देना होगा। दहेज प्रथा जैसी सामाजिक बुराइयों को भी जड़ से खत्म करना जरूरी है। सरकार को सरल और किफायती शादियों को प्रोत्साहित करने के लिए नीतियां बनानी चाहिए।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मुस्लिम महिलाओं को न्याय

'सुप्रीम कोर्ट का बड़ा फैसला' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय पढ़ा। सुप्रीम कोर्ट ने मुस्लिम समाज की महिलाओं के हक में महत्वपूर्ण फैसला सुनाया है कि इन्हें भी पति से तलाक के बाद गुजारा भत्ता लेने का हक है। इस निर्णय का मुस्लिम समाज पर व्यापक प्रभाव होगा। यह स्पष्ट करता है कि भारत का संविधान किसी पंथ-मजहब विशेष के हिसाब से नहीं चलेगा, बल्कि सभी नागरिकों को समान दृष्टि से देखेगा। इससे अब पूरे देश में समान नागरिक संहिता का रास्ता आसान हो गया है। इस निर्णय से हमारे देश के पंथनिरपेक्ष तानेबाने को और मजबूती मिलेगी। हालांकि कोर्ट का यह फैसला तभी परवान चढ़ेगा जब मुस्लिम समाज में तलाक कानून के तहत होंगे और इस समाज की महिलाएं अपने हक के लिए जागरूक होंगी और अपने हित के लिए आवाज बुलंद करेंगी। बहुत सी महिलाएं अभी भी परिवार की इज्जत की खातिर अपने हक के लिए आवाज नहीं उठाती हैं। वहीं, जो मुस्लिम पुरुष इसका विरोध कर रहे हैं, उनसे यह सवाल है कि कितने मुस्लिम देशों या अन्य देशों में हर धर्म के नागरिकों के लिए अलग-अलग कानून हैं? यहां सवाल यह भी है कि जब संविधान में हर धर्म-जाति के लोगों को एकसमान अधिकार और कर्तव्य का प्रविधान है, ऐसे में सब पर समान कानून लागू करने में किसी को क्यों हर्ज होना चाहिए? अगर कोई रीति-रिवाज या परंपरा महिलाओं और लड़कियों पर अत्याचार का कारण बन रही हो तो सरकार के लिए हस्तक्षेप कर उन्हें न्याय देना जरूरी हो जाता है।

raju09023693142@gmail.com

मेलबाक्स

महत्वपूर्ण आदेश

भारत जैसे पंथनिरपेक्ष देश में अलग-अलग समुदायों के लिए तलाक, गुजारा-भत्ता, उत्तराधिकार, गोद लेने आदि के नियम मजहब और पंथ के आधार पर निर्धारित नहीं होने सकते। तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को भी भारतीय संविधान के अनुरूप गुजारा-भत्ता मिलने का हक है। यह बात अलग है कि 1988 के शहबानो केस में गुजारा-भत्ते संबंधी सुप्रीम कोर्ट के एक ऐसे ही फैसले को मुस्लिम तुष्टीकरण की नीति पर चलते हुए कांग्रेस की तत्कालीन राजीव गांधी सरकार द्वारा 'मुस्लिम महिला अधिनियम' बनाकर पलट दिया गया हो, लेकिन पुनः वैसे ही केस में सुप्रीम कोर्ट के हालिया फैसले से यह सिद्ध हो गया है कि उस समय तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के हित में दिए गए सुप्रीम कोर्ट के एक औचित्यपूर्ण मानवीय फैसले को पलट कर देश के तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने ठीक नहीं किया था। यह न केवल मुस्लिम महिलाओं के हितों पर राजीव गांधी सरकार द्वारा किया गया कुठाराघात था अपितु संविधान प्रदत्त संसदीय अधिकारों के दुरुपयोग का एक नमूना भी था। ऐसे में देखने वाली बात यह होगी कि 'संविधान बचाओ' के नारे के साथ लोकसभा चुनाव में उतरने वाली कांग्रेस और उसके सिपहसालार राहुल गांधी जिन्होंने संविधान की प्रति हाथ में लेकर संसद सदस्यता की शपथ ली थी, क्या तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के हक में दिए गए सुप्रीम कोर्ट के हालिया फैसले का स्वागत करने का साहस जुटा पाएंगे?

pandeyvp1960@gmail.com

भारतीय विदेश नीति की कठिन परीक्षा

'चीन के साथ अमेरिका से भी सतर्क रहे भारत' शीर्षक से लिखे आलेख में दिव्य कुमार सोती ने बताया कि यह समय भारतीय विदेश नीति के लिए कठिन परीक्षा का है। अमेरिका अपने हितों की खातिर भारत को ढाल के तौर पर इस्तेमाल करना चाहता है। वक्त-बेवक्त उसकी नीतियों में यह स्पष्ट होता है कि वह और उसके मित्र राष्ट्र भारतीय हितों की परवाह नहीं करते दिखते हैं। इसका सबसे बेहतरीन उदाहरण कनाडा द्वारा खालिस्तानियों को दिया जाने वाला सहयोग और समर्थन है जिसे अमेरिका का भी शह प्राप्त है। वहीं वह चाहता है कि भारत रूस यूक्रेन युद्ध में नाटो देशों की भांति अमेरिका का एकतरफा समर्थन करे, जबकि यूक्रेन युद्ध की वजह से रूस का झुकाव चीन की तरफ बढ़ रहा है।

mukeshkr.m7542@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

****

हिन्दुस्तान 1936 सत्य • सार्थक • सदैव

पाक जाने पर ऊहापोह

अगले साल फरवरी-मार्च में पाकिस्तान में होने वाले चैंपियन्स ट्रॉफी क्रिकेट टूर्नामेंट में टीम इंडिया के वहां जाने को लेकर जिस तरह की आशंकाएं जताई जा रही हैं, उसने एक बार फिर इन दोनों पड़ोसी देशों के आपसी रिश्तों के तनाव को सार्वजनिक कर दिया है। हालांकि, बीसीसीआई से पहले केंद्र सरकार को यह निर्णय लेना है कि भारतीय टीम को वहां जाने की इजाजत दी भी जाए या नहीं, पर चूंकि 2008 के मुंबई हमले के बाद से ही दोनों देशों के रिश्तों में खटास यथावत बनी हुई है, इसलिए टीम इंडिया के पाकिस्तान जाने को लेकर कयासबाजी जारी है और सूत्रों के हवाले से दावे किए जा रहे हैं कि भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड ने आईसीसी से यह कहा है कि इस टूर्नामेंट के तहत टीम इंडिया के मैच श्रीलंका या दुबई में आयोजित किए जाएं। दरअसल, पाकिस्तान की मेजबानी में हुए पिछले एशिया कप टूर्नामेंट में भी भारत के मैच 'हाइब्रिड मॉडल' के तहत श्रीलंका में खेले गए थे। इसी से ताजा अटकलों को आधार मिला है।

भारत और पाकिस्तान, दोनों देशों में क्रिकेट को लेकर एक खास तरह का जुनून है और दोनों के आपसी क्रिकेट मैच को लेकर तो जबर्दस्त उत्साह रहता है। निस्संदेह, वहां भी भारतीय क्रिकेटरों के मुरीदों की कोई कमी नहीं और भारत में भी कई पाकिस्तानी क्रिकेटरों के खेल को लोग खुलकर सराहते हैं। मगर कोई भी खेल या खिलाड़ी राष्ट्र-निरपेक्ष नहीं होता। ऐसे में, जम्मू-कश्मीर के पूर्व मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला ने उचित सवाल उठाया है कि आखिर पाकिस्तान ने भारत से रिश्ते सुधारने को लेकर ऐसा क्या किया है कि हमारी टीम वहां जाए? हम ही रिश्ते सुधारने की जिम्मेदारी अकेले क्यों उठाएं? जम्मू-कश्मीर में आज भी वह दहशतगर्दों को खाद-पानी मुहैया करा रहा है। हाल के आतंकी हमले इसके ठोस प्रमाण हैं। फिर ऐसा कैसे हो सकता है कि एक तरफ हम अपने जवानों को गंवाते रहें और दूसरी ओर, पाकिस्तान जाकर हमारे क्रिकेटर अपने खेल से लोगों का मनोरंजन करें?

पाकिस्तान सरकार की ईमानदारी के बिना आपसी क्रिकेट संबंधों का पटरी पर आना नामुमकिन है। चैंपियन्स ट्रॉफी में वहां जाने को लेकर इसीलिए दुविधा है।

पाकिस्तान क्रिकेट बोर्ड की माली हालत उसके मुल्क की आर्थिक स्थिति की तरह ही खस्ताहाल है और इसीलिए वह आईसीसी से लगातार गुजारिश करता रहा है कि वह बीसीसीआई को कायल करे कि दोनों देशों के क्रिकेट रिश्ते बहाल हो जाएं। मगर यह तभी मुमकिन होगा, जब पाकिस्तानी सरकार ईमानदार पहल करेगी। फिर सवाल हमारे खिलाड़ियों की सुरक्षा का भी है। जैसे कि ब्योरे हैं, यह टूर्नामेंट कराची, रावलपिंडी और लाहौर में होना है। पाकिस्तान की आंतरिक सुरक्षा की हालत किसी से छिपी नहीं है। वहां भारत के प्रति पारंपरिक वैर-भाव से पोषित लोगों की भी कोई कमी नहीं है। ऐसे में, पाकिस्तान सरकार हमारे क्रिकेटरों की सुरक्षा देने की गारंटी पर कितनी खरी उतर पाएगी, यह भी संदिग्ध है। इस पृष्ठभूमि में किसी तीसरे देश में हाइब्रिड मॉडल के तहत खेलने का सुझाव एक सुरक्षित विकल्प है। बहरहाल, पाकिस्तान को यह समझने की जरूरत है कि वह किसी अन्य देश पर तोहमत मढ़ने की स्थिति में नहीं है। उसका दोमुंहापन पूरी दुनिया के सामने कई बार उजागर हो चुका है और अब तो उसके मित्र देशों की मुद्राएं भी बदलने लगी हैं। इसलिए, उसे दुनिया का भरोसा जीतने के लिए दहशतगर्दों के पालन-पोषण से तौबा करनी पड़ेगी। यह न सिर्फ पूरी दुनिया के, बल्कि खुद उसके हक में है। उसके हुनरमंद क्रिकेटर या दूसरे कलाकार तभी सही मायने में 'सद्भावना दूत' कहला पाएंगे!

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 12 जुलाई, 1949

पश्चिमी बंगाल की अशांति

पश्चिमी बंगाल देश का सीमावर्ती प्रांत है। सीमा प्रांत होने के कारण सामान्यतः उसकी समस्याओं की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। किन्तु पिछले कुछ समय से इस प्रांत में जो अशांति फैली हुई है और आये दिन जिस प्रकार उपद्रव हो रहे हैं, उनको देखते हुए केन्द्रीय सरकार के लिए भी चिन्ता का कारण उत्पन्न हो गया है। कानून और व्यवस्था की रक्षा किसी भी सरकार की कार्यक्षमता की पहली कसौटी मानी जाती है। नागरिकों को शासन से सर्वप्रथम सुरक्षा का आश्वासन मिलना चाहिए। यदि उन्हें यह खतरा बना रहे कि उनकी जान-माल पर किसी भी क्षण हमला हो सकता है, तो कोई निगाह में शासन की प्रतिष्ठा शेष नहीं रह जायेगी। समाज का सामान्य जीवन निर्वाह भी असंभव हो जायेगा।

यों तो देश के किसी भी भाग में होने वाली घटना की प्रतिक्रिया दूसरे भागों पर होती ही है, किन्तु सीमा प्रांत की घटनाओं का विशेष असर पड़ता है। इस कारण भी भारत सरकार पश्चिमी बंगाल की मौजूदा अवस्था के प्रति उदासीन नहीं रह सकती। यह माना कि विभाजन ने पश्चिमी बंगाल के शासन की क्षमता को काफी प्रभावित किया है। पड़ोसी बर्मा की अशांत परिस्थितियां भी अपना कुछ न कुछ प्रभाव डाल रही हैं। उधर कम्युनिस्ट तोड़-फोड़ और हिंसात्मक साधनों द्वारा प्रांत में अराजकता और अव्यवस्था फैलाने पर तुले हुए हैं। इस कारण प्रांतीय सरकार को एक कठिन परिस्थिति का सामना करना पड़ रहा है। शांति और व्यवस्था पसंद हर व्यक्ति की सहानुभूति इस समय पश्चिमी बंगाल की सरकार के साथ होनी चाहिए।

किन्तु ऐसा मालूम पड़ता है कि पश्चिमी बंगाल की वर्तमान सरकार को शांति और व्यवस्था कायम रखने में सामान्य जनता का वह सहयोग नहीं मिल रहा है जो उसे मिलना चाहिए। यह नितान्त आवश्यक है कि जहां विद्रोही तत्त्व कानून और व्यवस्था को भंग करने की कोशिश कर रहे हों, वहां के लोग केवल निरपेक्ष दर्शक मात्र न रहें, बल्कि स्वयं अपने हित की दृष्टि से अशांति और अव्यवस्था का मुकाबला करने में सरकार का साथ दें। बिना जन-समर्थन के कोई भी सरकार अराजक और समाजद्रोही तत्त्वों का सफलतापूर्वक मुकाबला नहीं कर सकती। शांति और व्यवस्था की रक्षा के लिए प्रांतीय पुलिस का कार्यदक्ष और जागरूक होना भी आवश्यक है।

इस प्रगतिशील फैसले का स्वागत कीजिए

यहां स्कैन करें

कुरबान अली | वरिष्ठ पत्रकार

तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के गुजारे-भत्ते के पक्ष में आए सुप्रीम कोर्ट के ताजा फैसले ने साफ कर दिया कि सीआरपीसी में धर्म, संप्रदाय व जाति के आधार पर निर्णय नहीं होने चाहिए।

सुप्रीम कोर्ट ने एक ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए कहा है कि अब तलाकशुदा मुस्लिम महिलाएं भी भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) की धारा 125 के तहत अपने पूर्व पति से गुजारा-भत्ता मांग सकती हैं। सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला कई मायनों में अहम है और देश में समान नागरिक संहिता (यूनिफॉर्म सिविल कोड) लागू करने की दिशा में एक अहम मोड़ है। यह फैसला सन् 1985 में सुप्रीम कोर्ट द्वारा ही शाह बानो मामले में मुस्लिम तलाकशुदा महिला को गुजारा-भत्ता दिए जाने के निर्णय का समर्थन करता है और तत्कालीन राजीव गांधी सरकार द्वारा संसद में संविधान संशोधन करके तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित किए जाने के कदम को गलत ठहराता है, इसलिए इसका स्वागत किया जाना चाहिए।

सुप्रीम कोर्ट के दो जजों, न्यायमूर्ति बीवी नागरत्ना और जस्टिस ऑगस्टीन जॉर्ज मसीह ने अलग-अलग, पर एक जैसा फैसला सुनाते हुए कहा है 'कुछ पति इस तथ्य से अवगत नहीं हैं कि पत्नी, जो एक गृहिणी होती है, की पहचान भावनात्मक और अन्य तरीकों से उन पर ही निर्भर होती है।' अदालत ने यह भी कहा है कि 'एक भारतीय विवाहित महिला को इस तथ्य के प्रति सचेत होना चाहिए, जो आर्थिक रूप से स्वतंत्र नहीं है। इस तरह के आदेश से सशक्तीकरण का अर्थ है कि संसाधनों तक उसकी पहुंच बनती है। हमने अपने फैसले में 2019 के अधिनियम के तहत अवैध तलाक के पहलू को भी जोड़ा है। हम इस निष्कर्ष पर हैं कि सीआरपीसी की धारा-125 सभी महिलाओं (लिव-इन समेत) पर लागू होगी, न कि केवल विवाहित महिलाओं पर।'

सुप्रीम कोर्ट की पीठ ने यह फैसला सुनाते हुए एक मुस्लिम शख्स मोहम्मद अब्दुल समद की उस याचिका को खारिज कर दिया, जिसमें सीआरपीसी की धारा-125 के तहत तलाकशुदा पत्नी के पक्ष में अंतरिम भरण-पोषण के आदेश को उसने चुनौती दी थी। अदालत ने साफ किया कि मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986, सीआरपीसी की धारा-125 के प्रावधानों को रद्द नहीं करता।

दरअसल, इस प्रकरण की शुरुआत तेलंगाना के 'फैमिली कोर्ट' के उस फैसले से हुई, जिसमें समद को तलाक के बाद अपनी पूर्व पत्नी आगा को हर महीने 20,000 रुपये गुजारा भत्ता देने को कहा गया था। आगा ने सीआरपीसी की धारा-125 के अंतर्गत फैमिली कोर्ट में गुजारे-भत्ते की गुहार लगाई थी और यह कहा था कि समद ने उन्हें 'तीन तलाक' दिया है। अब्दुल समद ने इस फैसले के खिलाफ हाईकोर्ट में अपील की। हाईकोर्ट ने कहा कि इस मामले में कई सवाल उठाए गए हैं, जिन पर फैसला लेना होगा, लेकिन साथ ही उसने याचिकाकर्ता समद को 10,000 रुपये प्रतिमाह अंतरिम भत्ता देने को कहा। हाईकोर्ट के इसी निर्देश को चुनौती देते हुए समद ने सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा खटखटाया और कहा कि हाईकोर्ट ने इस बात को नजरअंदाज कर दिया है कि 1986 का कानून एक खास कानून है और सीआरपीसी की धारा-125 की तुलना में उसे ही माना जाएगा, क्योंकि सीआरपीसी एक आम कानून है।

गौरतलब है, सन् 1985 के शाह बानो मामले के बाद से ही सुप्रीम कोर्ट लगातार अपने फैसलों में यह कहता आ रहा है कि तलाकशुदा मुस्लिम महिलाएं भरण-पोषण की हकदार हैं। 'तीन तलाक' के फैसले में भी सुप्रीम कोर्ट ने मुस्लिम महिला के भरण-पोषण के पहलू को स्पष्ट किया था। सन् 1986 के कानून के बाद तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं के भरण-पोषण के बारे में सुप्रीम कोर्ट ने अपना पहला फैसला साल 2001 में 'दानियाल लतीफी बनाम भारत सरकार' मामले में सुनाया था और एक तरह से 1986 में केंद्र सरकार द्वारा किए गए संविधान संशोधन को रद्द कर दिया था।

इस नए फैसले ने शाह बानो मुकदमे के बाद के घटनाक्रमों को फिर जेहन में जिंदा कर दिया है। उस मुकदमे में सुप्रीम कोर्ट के फैसले और उसे लेकर अस्सी के दशक में हुई राजनीति ने देश को काफी प्रभावित किया था। तब राजीव गांधी सरकार में राज्य मंत्री रहे और आजकल केरल के राज्यपाल आरिफ मुहम्मद खान ने सुप्रीम कोर्ट के फैसले का जोरदार समर्थन किया था। हालांकि, उनका वह कृत्य कांग्रेस के अधिकतर सांसदों और नेताओं को पसंद नहीं आया था। इसके अलावा, मुसलमानों की एकमात्र नुमाइंदगी करने का दावा करने वाली संस्था 'ऑल इंडिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड' ने देशव्यापी स्तर पर सुप्रीम कोर्ट के फैसले के खिलाफ आंदोलन शुरू कर दिया और राजीव गांधी सरकार पर दबाव बनाना शुरू कर दिया कि वह संविधान संशोधन कराकर इस फैसले को बदले।

गौरतलब बात यह है कि भाजपा, शिव सेना और वामपंथी दलों को छोड़कर लगभग सभी प्रमुख राष्ट्रीय और क्षेत्रीय दलों ने मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड की इस नाजायज मांग का समर्थन किया था। राजीव सरकार के वरिष्ठ मंत्री ही नहीं, मोहसिना किदवई, मुफ्ती मुहम्मद सईद, जियाउर्रहमान अंसारी, सीके जाफर शरीफ, गुलाम नबी आजाद और नज्मा हेपतुल्लाह जैसे लोग भी इसी राय के थे कि शाह बानो मामले में आए सुप्रीम कोर्ट के फैसले को संसद के जरिये बदला जाए।

आखिरकार अपने दल के बहुमत के दबाव में कांग्रेस सरकार ने सुप्रीम कोर्ट के उस फैसले को संविधान संशोधन के जरिये बदलने का फैसला किया। तब जूनियर मंत्री आरिफ मुहम्मद खान ने विधेय-स्वरूप मंत्रिमंडल से इस्तीफा दे दिया। राजनीतिक विश्लेषकों के अनुसार, यहीं से देश में सांप्रदायिक राजनीति की शुरुआत हुई, जिसकी परिणति पहले अयोध्या में बाबरी मस्जिद का ताला खोले जाने और फिर उसके विध्वंस के रूप में हुई और भारतीय जनता पार्टी के सत्ता में आने का रास्ता साफ हुआ।

मुस्लिम तलाकशुदा महिला को न्याय दिलाने के बारे में सुप्रीम कोर्ट ने जो फैसला सुनाया है, उसके कई निहितार्थ हैं। एक तो यह कि जाब्ता फौजदारी (सीआरपीसी) में धर्म, संप्रदाय और जाति के आधार पर फैसले नहीं होने चाहिए और संविधान की जो मूल भावना है कि समान नागरिक संहिता बनाई जानी चाहिए उसका अब वक्त आ गया है। दूसरे यह कि समान नागरिक संहिता के बारे में सरकार क्या सोचती है, उसका एक मसौदा देश की जनता के सामने पेश किया जाना चाहिए, ताकि उस पर आम सहमति बन सके और उसे जल्द से जल्द लागू किया जा सके और सबसे महत्वपूर्ण यह कि अदालतों के इस तरह के प्रगतिशील फैसलों का स्वागत किया जाना चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

अचानक आती बाढ़ में डूबते शहरों को उबारने के उपाय

यहां स्कैन करें

आलोक शील | पूर्व सचिव, जल संसाधन, केरल

हर साल मानसून में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर) की बाढ़ के वीडियो में सोशल मीडिया डूबता-उतराता रहता है, पर पिछले कुछ दिनों में विशेष रूप से भयावह तस्वीरें सामने आई हैं। बेशक, सार्वजनिक कार्यों में भ्रष्टाचार और जलवायु परिवर्तन ने नुकसान बढ़ा दिया है, पर इस समस्या के बुनियादी कारण हैं। करीब आठ साल पहले मैंने कहा था, अचानक आने वाली बाढ़ लंबे समय से गंगा के मैदानी इलाकों की एक विशेषता रही है। अभिलेखागार से प्राप्त 1860 के दशक के दक्षिण बिहार के आंकड़ों से पता चलता है कि बरसात के मौसम में अचानक बाढ़ आ जाना आम बात थी, क्योंकि गंगा और उसकी सहायक नदियां अपने किनारों से आगे बढ़ने लगती थीं। हालांकि, यह बाढ़ कुछ ही दिनों में उतर भी जाती थी, जिससे बहुत कम नुकसान होता था और पूरे इलाके में गाद की एक परत रह बचती थी, जो मिट्टी को फिर से पोषक तत्वों से भरपूर बना देती थी। इससे किसानों को खूब फायदा होता था।

बाढ़ से प्रभावित होने वाले इलाकों में जलभराव की शुरुआत ब्रिटिश शासन के दौरान किए गए शुरुआती विकास कार्यों से हुई। उस वक्त नहरें, सदाबहार सड़कें, रेलवे ट्रैक आदि बनाए गए, जिनमें तटबंधों का निर्माण किया गया और जिन्होंने आमतौर पर जल निकासी के प्राकृतिक रास्तों को बंद कर दिया। फिर बड़े पैमाने पर शहरीकरण के बाद यह समस्या कहीं अधिक जटिल हो गई। एनसीआर में बाढ़ के लिए महज तीन घंटे की भारी बारिश ही काफी है। इससे बुनियादी ढांचे, निजी संपत्ति और जनजीवन को काफी नुकसान पहुंचता है। मुंबई, चेन्नई, तिरुवनंतपुरम और अन्य भारतीय शहर भी इसी तरह पीड़ित हैं। आठ साल पहले मेरा मानना था कि जल निकासी की बेहतर व्यवस्था से इसका समाधान हो सकता है, पर बाद में मुझे यही एहसास हुआ है कि बाढ़ को रोका नहीं जा सकता, केवल कुछ कम किया जा सकता है।

अगर एनसीआर किसी तट पर स्थित होता, तो अतिरिक्त पानी समुद्र में बहकर चला जाता। मगर दिल्ली पृथ्वी के सबसे समतल स्थानों में से एक है। यहां सामान्य बारिश का पानी संचय हो जाता है, जो भूजल को रिचार्ज कर देता है। मगर लगातार व अत्यधिक बारिश से भूजल पूरी तरह रिचार्ज हो जाता है और पानी सतह के ऊपर से बहने लगता है। यह पानी कहां जाएगा, खासतौर से जब नदियों का जलस्तर अधिक हो गया हो? तटीय शहरों में यह पानी सीधे समुद्र में चला जाता है, लेकिन मैदानी इलाकों से पानी निकलने में वक्त लगता है, क्योंकि नदियां एक तय समय पर ही समुद्र से मिलती हैं। समय का यही अंतर बाढ़ का कारण बनता है और जब भारी बारिश बंद हो जाती है, तब पानी घटने लगता है और नदी में समाने लगता है।

अगर एनसीआर किसी तट पर स्थित होता, तो अतिरिक्त पानी समुद्र में चला जाता। मगर दिल्ली सबसे समतल स्थानों में से एक है।

सवाल है कि यदि जल निकासी की व्यवस्था अच्छी हो और उसका बेहतर रख-रखाव हो, तो इस मसले का दीर्घकालिक समाधान क्या है? पहला, पहाड़ियों में उन जगहों पर जलाशय अधिक बनाए जाएं, जहां से नदियां मैदानी इलाकों में उतरती हैं। हालांकि, इनसे जुड़ी पर्यावरणीय, तकनीकी और बाढ़ संबंधी चिंताएं हैं, जिनको जलाशय निर्माण के वक्त ध्यान देना होगा। बेशक जलाशयों की संख्या समय के साथ बढ़ रही है, लेकिन ये मैदानी इलाकों की बाढ़ को रोकने में पर्याप्त नहीं हो सकते। दूसरा, तालाबों, कुओं, झीलों और तमाम जल-संरचनाओं को साफ, गहरा और पुनर्जीवित करना होगा, ताकि मानसून में अतिरिक्त पानी का बहाव हो सके।

तीसरा, शहरी क्षेत्रों में कंक्रीट का इस्तेमाल कम करना होगा, जिससे भूजल का भंडारण बढ़ सके। हमें अधिक पार्क, मैदान, खुले फुटपाथ आदि की आवश्यकता है। चौथा, पानी के बहाव के प्राकृतिक रास्ते बहाल करने होंगे, ताकि पानी किसी निचले इलाके में न ठहरे, बल्कि यमुना में चला जाए। अंडरपास की जगह एलिवेटेड सड़कें बनाई जानी चाहिए। पांचवां, जल निकासी की व्यवस्था को दुरुस्त करना होगा और उसकी साफ-सफाई करवानी होगी। यह समझना होगा कि मानसूनी बारिश से पैदा होने वाली परेशानियों से बचने के उपाय किए जा सकते हैं, पर बरसात के मौसम में नदियों के जलस्तर को बढ़ने से कोई रोक नहीं सकता। शहरी योजनाकारों को यह ध्यान रखते हुए समस्या का समाधान तलाशना चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

अतीतजीवी होना अच्छा नहीं

असफलता में भी सफलता की तैयारी होती है; हमारी रातें अपने में एक महानतर अरुणोदय का रहस्य लिए रहती हैं। मगर यदि कोई जाति अथवा सभ्यता शक्तिशाली होते हुए भी अंधी होकर उन प्रवृत्तियों पर जोर देती है, जो विनाश की ओर ले जाती हैं या यदि वह केवल मृत-काल की शक्तियों को ही पोषित करती है और भविष्य की शक्तियों को अपने से अलग रखती है; यदि वह जो जीवन था, उसे, जो जीवन होगा, उससे अधिक पसंद करती है, तो प्रचुर शक्ति, साधन और अवसर भी उसे अपरिहार्य विघटन से नहीं बचा सकेंगे। किंतु यदि उसमें अपने में एक सशक्त विश्वास और जीवित रहने का पुष्ट संकल्प आ जाता है, तो वह प्रतिकूलता और पराजय से भी अजेय विजय का बल निकाल सकती है और असहायता व अवनति से पुनरुद्धार की महान ज्योति के रूप में ऊपर उठकर अधिक भव्य जीवन के प्रकाश की ओर जा सकती है। यही करने के लिए अब भारतीय सभ्यता फिर से उठ खड़ी हो रही है, जैसी वह अपनी आत्मा की अखंड शक्ति में सदैव करती आई है।

भारतीय मानस के सबसे अधिक विरागी स्वरों में भी ऐसा कुछ नहीं है, जैसा यूरोपीय निराशावाद का काला अवसाद है। वहां मृत्यु से पहले की दुखी और सिकुड़ती जैसी प्रवृत्ति भी नहीं है, जो पाश्चात्य साहित्य में है। विरागी निराशावाद का स्वर, जो प्रायः 'क्रिश्चियनिटी' में पाया जाता है, पाश्चात्य स्वर है, क्योंकि वह ईसा मसीह के उपदेशों में विद्यमान नहीं है। अपने सलीब के साथ कष्ट द्वारा मुक्ति तथा कब्र के उस पार मनुष्य के लिए इंतजार करती हुई अनंत नरक की लपटें, इस सबमें जो आतंक की छाप है, वह भारतीय मानस के लिए विदेशी है, उसमें वस्तुतः धार्मिक आतंक अज्ञात है।...

भारतीय वैराग्य दुख का एक शोकप्रद धर्मोपदेश अथवा विकृत तपस्या में शरीर का कष्टदायक दमन नहीं है, बल्कि एक उच्चतर आनंद और आत्मा के संपूर्ण आधिपत्य की ओर किया गया उत्कृष्ट प्रयास है।... उसके लिए वैराग्य चुने गए अपेक्षाकृत कुछ लोगों द्वारा ही व्यवहृत नहीं है, किंतु अपने वृहद् रूप में सभी के लिए उपदिष्ट होने और हजारों अनुपयुक्त लोगों द्वारा अंगीकार किए जाने से, उसके मूल्यों में गिरावट आ सकती है, नकलों की बहुतायत हो सकती है और समुदाय की जीवन-शक्ति अपना लचीलापन तथा अपनी अग्रगामी गति खो सकती है। यह दावा करना व्यर्थ होगा कि ऐसे दोष और मद्दे परिणाम भारत में मौजूद नहीं रहे हैं।

यदि किसी सभ्यता में एक सशक्त विश्वास और जीवित रहने का पुष्ट संकल्प आ जाता है, तो वह प्रतिकूलता और पराजय से भी अजेय विजय का बल निकाल सकती है।

मानव अस्तित्व की समस्या के अंतिम हल के रूप में मैं वैराग्य के आदर्श को स्वीकार भी नहीं करता; किंतु उसकी अतिशयोक्तियों के पीछे भी एक महान भावना है, बनिस्बत जैव-शक्तियादी अतिशयोक्तियों के, जो कि पश्चिमी संस्कृति के विपरीत दोष हैं।

श्री अरविंद

डॉ एस वाई कुरैशी | पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त

आप सूर्य कुमार यादव के कैच की तारीफ जरूर कर सकते हैं, लेकिन भारत की क्रिकेटर बेटी हरलीन देओल द्वारा लिए गए कैच पर भी एक नजर डाल लीजिए। मीडिया ने उसे नजरअंदाज क्यों किया?

आधी आबादी को संबल देने वाला फैसला

सुप्रीम कोर्ट ने तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को गुजारा भत्ता पाने का अधिकार देकर एक ऐतिहासिक फैसला सुनाया है। शीर्ष अदालत ने यह भी कहा कि विवाहित महिला किसी भी धर्म की हो, उसे गुजारा भत्ता पाने का अधिकार है। सीआरपीसी की धारा-125 उनको यह अधिकार देती है। यह उन तलाकशुदा, परित्यक्ता, बेसहारा औरतों को आर्थिक रूप से संबल प्रदान करेगा, जो पतियों द्वारा किसी न किसी वजह से त्याग दी जाती हैं। खासकर उन महिलाओं को ज्यादा गुजारे-भत्ते की जरूरत होती है, जिनका कोई आर्थिक आधार नहीं होता है। वे स्वयं के साथ-साथ बच्चों का लालन-पालन, भरण-पोषण के लिए मेहनत-मजदूरी करके जैसे-तैसे गुजारा करती रहती हैं। शादी जब की है, तो कम से कम पत्नी को इतना हक तो जरूर मिलना चाहिए। ये महिलाएं भी इंसान हैं, कोई खिलौना नहीं। यह फैसला मील का पत्थर साबित होगा। इसका हम सभी को स्वागत करना चाहिए।

हेमा हरि उपाध्याय, टिप्पणीकार

एक बड़ा संदेश

सुप्रीम कोर्ट ने अपने फैसले में तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को भी पति से भरण-पोषण पाने का अधिकार दिया है। यह निर्णय ऐतिहासिक है और हमारे संविधान के मूल सिद्धांतों को और मजबूत करता है। यह फैसला केवल मुस्लिम महिलाओं के हक की बात नहीं करता, बल्कि पूरे देश की आधी आबादी के अधिकारों के प्रति संविधान की प्रतिबद्धता को दर्शाता है। यह निर्णय उन सभी महिलाओं के लिए एक बड़ा संदेश है, जो अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर रही हैं। संविधान के तहत सभी नागरिकों को समान अधिकार मिलना ही चाहिए। उल्लेखनीय है कि यह फैसला उन तमाम सामाजिक-धार्मिक आपत्तियों के बावजूद आया है, जो इसे कमजोर करने की कोशिश कर रहे थे। स्पष्ट है, इस निर्णय का व्यापक प्रभाव होगा, क्योंकि यह राजीव गांधी सरकार के समय लिए गए फैसले को उलटता है और साफ करता है कि भारत का संविधान किसी धर्म विशेष के हिसाब से नहीं चलेगा, बल्कि सभी नागरिकों को समान दृष्टि से देखेगा। सुप्रीम कोर्ट का यह निर्णय हमारे समाज को सही दिशा में ले जाने वाला एक महत्वपूर्ण कदम है। यह देश की सभी महिलाओं के लिए समान न्याय और सम्मान सुनिश्चित करेगा। लिहाजा, इस फैसले को राजनीतिक चश्मे से देखने और इसके बहाने माहौल बिगाड़ने की साजिश करने वालों से बचें। हम मिलकर इस फैसले का समर्थन करें और इसे लागू करने में योगदान दें।

अवनीश कुमार गुप्ता, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम

गुजारा-भत्ता

मुस्लिम बिरादरी इसे कैसे स्वीकार करेगी

तेलंगाना के एक मुस्लिम शख्स ने अपनी तलाकशुदा पत्नी को भत्ते के रूप में दस हजार रुपये देने के हाईकोर्ट के आदेश को चुनौती दी थी। इसके बाद सुप्रीम कोर्ट ने यह फैसला सुनाया कि पत्नी को गुजारा भत्ता मिलेगा। जस्टिस बीवी नागरत्ना और जस्टिस ऑगस्टीन जॉर्ज मसीह ने अलग-अलग, लेकिन एकमत से फैसला सुनाते हुए कहा कि सीआरपीसी की धारा-125 सभी महिलाओं पर लागू होती है, जिनमें शादीशुदा मुस्लिम महिलाएं भी शामिल हैं। यानी, इसमें धर्म की कोई शर्त नहीं है। उन्होंने जोर देकर कहा कि अगर किसी मुस्लिम महिला को धारा-125 सीआरपीसी के तहत आवेदन के दौरान तलाक दे दिया जाता है, तो वह मुस्लिम महिला विवाह पर अधिकारों का संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत गुहार लगा सकती है, जो अतिरिक्त उपाय प्रदान करता है। क्या इसका यह मतलब है कि शाह बानो केस में गुजारा-भत्ता देने के कोर्ट के आदेश को ओवररूल करने के लिए राजीव गांधी सरकार द्वारा बनाए गए कानून को रद्द कर दिया गया है? मुसलमान जनता अपनी ही जिद और गलती का नतीजा ऐसे भुगतती रहेगी। वह कांग्रेस थी, वह राजीव थे, जिन्होंने सुप्रीम कोर्ट के सुनाए फैसले को पलटने के लिए कानून बनाकर शरीयत के तलाक के नियमों को लागू करवाया। कहा जाता है कि इसी एक बात से एक बड़ी आबादी उनकी सरकार के खिलाफ हो गई थी, जिससे उन्हें अगला चुनाव हारना पड़ा था। आज का मुसलमान कांग्रेस से दूर जा चुका है। वह कौम किसी को भी वोट दे देगा, लेकिन कांग्रेस पर शायद ही भरोसा करेगा। मगर इसमें उसे कितना नुकसान हो रहा है, वह अब समझ सकता है। फिर भी, उसे यह सब नहीं दिखेगा, उसकी समझ में नहीं आएगा, वह कांग्रेस से दुश्मनी बनाए रखेगा। फिर भुगतते रहिए। यही आसमानी इंसाफ है।

वीरेंद्र सिंह रावत, टिप्पणीकार

पहले जागरूक बनाइए

यह सही है कि किसी भी धर्म में यदि कोई गड़बड़ी है, तो उसे ठीक किया जाना चाहिए, पर सुखद स्थिति यह होती कि ठीक करने की कवायद उस धर्म को मानने वाले लोगों द्वारा ही शुरू हो। कानूनी डंडे से कोई काम नहीं हो सकता। पहले लोगों को जागरूक ताे करिए, फिर फैसले पर अमल के प्रयास कीजिएगा। भारत में सभी कुरीतियों के खिलाफ कानून बने हैं, पर उनका पालन कितना होता है? अगर पालन होता, तो दहेज बीते दिनों की बात हो चुकी होती। मुस्लिम महिलाओं की बेहतरी तभी होगी, जब मुस्लिम समाज इसके लिए खुद तैयार होगा।

पूजा यादव, टिप्पणीकार

कल्पमेधा

जिस तरह हर व्यक्ति यह सिद्धांत दोहराता है कि एक देश दूसरे देश पर शासन नहीं कर सकता, उसी प्रकार उसे यह भी मानना होगा कि एक वर्ग दूसरे पर शासन नहीं कर सकता।
– बाबा साहेब भीम राव आंबेडकर

युद्ध के विरुद्ध

दुनिया भर में अलग-अलग देश प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जिस तरह के खेमों में बंट रहे हैं, जैसे अंतरराष्ट्रीय मुद्दे खड़े हो रहे हैं, उसमें लगातार इस बात की आशंका खड़ी हो रही है कि आने वाले वक्त में कहीं युद्ध के मोर्चों का विस्तार न हो जाए! रूस और यूक्रेन या फिर इजराइल और हमास के बीच चल रहे युद्ध ने इस आशंका को गहरा किया है। ऐसे में भारत ने जिस तरह युद्ध के विरुद्ध खड़े होने और सार्वजनिक रूप से शांति के लिए अपनी नीति घोषित करने का साहस किया है, उसकी अपनी अहमियत है। पहले रूस और उसके बाद आस्ट्रिया के दौरे में भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने एक तरह से स्पष्ट रूप से दुनिया भर में युद्ध की परिस्थितियों को खत्म करके शांति की वकालत की। बुधवार को उन्होंने साफ लहजे में कहा कि यह युद्ध का समय नहीं है; भारत ने दुनिया को युद्ध नहीं, बल्कि बुद्ध दिया है। यह हर जगह शांति और समृद्धि का आकांक्षी है और इक्कीसवीं सदी में अपनी भूमिका को पहले से ज्यादा मजबूत बनाएगा।

यों दोनों देशों की यात्रा के दौरान भारतीय प्रधानमंत्री ने वहां के शीर्ष नेतृत्व से बातचीत की और द्विपक्षीय सहयोग की नई संभावनाओं पर विचार किया। मगर अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य में बनते खेमों के बीच जैसे हालात बन रहे हैं, उसमें वैश्विक स्तर पर शांति के पक्ष में भारत का खड़ा होना अहम है। दरअसल, वह रूस-यूक्रेन के बीच जारी युद्ध हो या फिर इजराइल और हमास के बीच, भारत का यह रुख जगजाहिर रहा है कि वह युद्ध का समर्थन नहीं करता। वहीं आतंकवाद के मसले पर भी भारत की साफ राय है कि यह किसी भी रूप में स्वीकार्य नहीं है। यूक्रेन और रूस के बीच चल रहे युद्ध को खत्म करने के लिए भी भारत के प्रधानमंत्री ने पहले भी कई बार बातचीत का रास्ता अपनाने की ही सलाह दी है। आस्ट्रिया दौरे में भी अगर उन्होंने भारत के शांति का पक्षधर होने की बात की तो यह स्वाभाविक और अपनी नीतियों पर ही कायम रहना है।

यह छिपा नहीं है कि जहां रूस और यूक्रेन के बीच युद्ध के संकट में कोई कमी नहीं दिख रही है, वहीं अमेरिका और उसके कई सहयोगी देश नाटो की बैठक करके एक अलग ही संदेश देने की कोशिश कर रहे हैं। इस तरह के हालात में भारतीय प्रधानमंत्री की रूस और आस्ट्रिया की यात्रा और इस दौरान दिए गए संदेश का मतलब साफ है। विश्व का जो भी हिस्सा युद्ध या आतंकवाद से प्रभावित है, वहां सामान्य विकास की तो दूर, जनजीवन के बाधित होने और मानव अधिकारों का हनन आम है। ऐसे में दुनिया की महाशक्तियां अगर लोकतंत्र बचाने की बात करती हैं, तो यह अपने आप में एक विरोधाभासी स्थिति है। युद्ध और आतंकवाद को खत्म किए बिना और शांति कायम किए बगैर कहीं भी मानव अधिकारों और लोकतांत्रिक मूल्यों को जीवन नहीं दिया जा सकता। इस समूचे संदर्भ में भारत का पक्ष हमेशा से स्पष्ट रहा है। यही वजह है कि भारत ने अक्सर इस बात पर जोर दिया है कि यहां के लोग बुद्ध और उनके विचार के रास्ते पर चल कर दुनिया भर में शांति और सौहार्द की उम्मीद करते हैं। फिलहाल अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य में जिस तरह की खेमेबंदी हो रही है, युद्ध के नए मोर्चे खुलने की आशंका खड़ी हो रही है, उसमें भारत ने शांति के पक्ष में अपनी भूमिका की निभाने की जो घोषणा की है, उसकी जरूरत दुनिया भर को है।

बेटियों की जगह

जिस दौर में अमूमन सभी मोर्चों पर मौका मिलने पर लड़कियां अपने बरक्स या समांतर खड़े लड़कों से खुद को बराबर या बेहतर साबित कर रही हैं, उसमें ऐसी खबर निराशा और दुख से भर देती है कि एक व्यक्ति ने बेटे की चाह में अपनी जुड़वां नवजात बेटियों की हत्या कर दी। इक्कीसवीं सदी का सफर तय करते आधुनिक मूल्यों वाले देश में यह हैरान करने वली घटना लगती है, मगर आज भी ऐसे लोग हैं, जो लड़कियों के खिलाफ इस हद तक संकीर्ण सोच और रवैया रखते हैं। खबर के मुताबिक, बाहरी दिल्ली में रहने वाले एक व्यक्ति ने अपनी तीन दिन की जुड़वां बेटियों की सिर्फ इसलिए हत्या कर दी, क्योंकि वह बेटा चाहता था। यह कोई दूरदराज के इलाके की नहीं, बल्कि देश की राजधानी दिल्ली की घटना है, जहां माना जाता है कि समाज अपेक्षया आधुनिक मूल्यों के बीच जीता है और लैंगिक बराबरी के साथ-साथ बेटियों की सुरक्षा और उन्हें समान जीवन-स्थितियां मुहैया कराने को लेकर सरकार की ओर से भी अक्सर जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाते हैं।

आज तकनीक की दुनिया इतनी विस्तृत हो चुकी है कि दूरदराज के इलाके में बैठा व्यक्ति भी यह देख-समझ सकता है कि समाज में निचले स्तर से लेकर उच्च स्तर की पढ़ाई-लिखाई या बेहतर पदों पर नौकरी हासिल करने के मामले में लड़कियां किसी भी तरह से लड़कों से कम नहीं हैं। यों एक सभ्य समाज में समानता के दृष्टिकोण के लिए इस तरह के उदाहरणों की जरूरत नहीं पड़नी चाहिए, लेकिन जड़ मानसिकता वाले व्यक्ति के लिए ऐसे उदाहरण काम के हो सकते हैं। समाज में लैंगिक बराबरी के हक में लड़ाई के लंबे दौर का हासिल यह रहा है कि आज हर स्तर पर महिलाएं पुरुषों के साथ समांतर खड़ी हैं और जहां भी मौका मिल रहा है, वहां वे अपनी क्षमताएं साबित कर रही हैं। इसके बावजूद अगर बेटे की इच्छा रखने की वजह से बेटी की हत्या की खबर आती है तो यह एक समाज और व्यवस्था की नाकामी का ही सबूत है। देश की सरकारों ने बेटियों को बचाने और पढ़ाने के नारे तो खूब दिए, मगर जमीनी स्तर पर पितृसत्तात्मक दुराग्रहों को खत्म करने को लेकर इतनी गंभीरता नहीं बरती कि सुरक्षा और समानता बेटियों के लिए सहज जीवन का हिस्सा हो।

तेल में मिलावट का खेल

महंगाई की वजह से सरसों के तेल में मिलावट की जड़ें देश में मजबूती से फैली हुई हैं। बाजार में नकली सरसों का तेल भी खूब बिक रहा है।

अमित बैजनाथ गर्ग

इन दिनों खाद्य तेलों में मिलावट के मामले लगातार सामने आ रहे हैं। मिलावटी तेल से कई बार लोगों के बीमार होने और मौत होने तक की घटनाएं घट जाती हैं। सरसों तेल में मिलावट की वजह से होने वाले रोगों को 'ड्राप्सी' कहा जाता है। ड्राप्सी का पहला मामला सन 1877 में पश्चिम बंगाल में सामने आया था। हालांकि यह रोग उत्तर भारत में प्रचलित था, जहां सरसों के तेल का प्रमुख रूप से उपयोग किया जाता है। दक्षिण भारतीय राज्यों में ड्राप्सी का कोई मामला नहीं आया, क्योंकि वहां बड़े पैमाने पर मूंगफली या नारियल के तेल का उपयोग होता है। देश के कुछ हिस्सों में 1998 में भी सरसों के तेल में मिलावट के मामले सामने आए थे। इस महामारी ने सरसों तेल की बिक्री को काफी हद तक प्रभावित किया। पिछले दो दशक में कई अन्य तेल, खासकर रिफाइंड तेल ने सरसों तेल के इस अंतराल को भरते हुए बाजार में जबर्दस्त फायदा उठाया है।

सरसों के तेल में आर्जीमोन तेल और दूसरे निम्न गुणवत्ता वाले तेलों की मिलावट की जाती है, जिससे इसकी शुद्धता, पौष्टिकता और गुणवत्ता खराब हो जाती है। इसके अलावा सरसों के तेल में अरंडी का तेल मिलाया जाता है। विशेषज्ञों का कहना है कि अब 80 फीसद सरसों तेल 'राइस ब्रान' यानी धान की भूसी का तेल मिलाकर बनाया जा रहा है।

सरसों का तेल अमेरिका सहित कई देशों में प्रतिबंधित है। अमेरिकी खाद्य एवं औषधि प्रशासन के अनुसार, सरसों के तेल में 'इरुसिक एसिड' की मात्रा काफी अधिक होती है। यह एक प्रकार का फैटी एसिड है और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। यह ठीक से पच नहीं पाता और मस्तिष्क की कोशिकाओं को भी नुकसान पहुंचाता है। इरुसिक एसिड कई मानसिक विकारों, जैसे याददाश्त कमजोर होने, से भी जुड़ा हुआ है। यह शरीर में वसा के संचय को बढ़ाता है। इसलिए अमेरिका, कनाडा और यूरोप ने सरसों तेल के उपयोग पर प्रतिबंध लगाया हुआ है। असल में, इरुसिक एसिड एक प्रकार का 'मोनोअनसैचुरेटेड ओमेगा-9 फैटी एसिड' है। अध्ययनों के अनुसार, इरुसिक एसिड के अधिक सेवन से स्वास्थ्य पर कई संभावित दुष्प्रभाव हो सकते हैं। इरुसिक एसिड के उच्च स्तर को मायोकार्डियल लिपिडोसिस के विकास से जोड़ा गया है। यह एक ऐसी स्थिति है, जिसमें हृदय की मांसपेशियों की कोशिकाओं में वसा जमा हो जाती है, जो हृदय के कार्य को खराब कर सकती है। इरुसिक एसिड के अत्यधिक सेवन से लिवर बढ़ सकता है और फैटी लिवर रोग विकसित हो सकता है।

हालांकि मनुष्यों में इन प्रभावों को पूरी तरह से समझने के लिए और अधिक शोध की आवश्यकता है। इरुसिक का अधिक सेवन करने से 'गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल' समस्याएं हो सकती हैं, जिसमें दस्त, पेट में ऐंठन और मतली शामिल हैं। हालांकि अभी तक निर्णायक रूप से सिद्ध नहीं हुआ है, लेकिन लंबे समय तक इस एसिड के उच्च स्तर के सेवन के संभावित कैंसरजन्य प्रभावों के बारे में भी कुछ चिंताएं हैं।

विशेषज्ञों का कहना है कि पहले सरसों के तेल में धान की भूसी का तेल बहुतायत में मिलाया जाता था, लेकिन अब पाम आयल मिलाया जाने

लगा है। पाम आयल सस्ता होने के कारण दुकानदार को अधिक मुनाफा होता है। इन तेलों में रंग, खुशबू और मिर्च का अर्क, सिंथेटिक एलिल आइसोथियोसाइनेट, प्याज का रस और फैटी एसिड की मिलावट की जाती है। त्योहारों और शादियों के मौसम में मांग बढ़ने से मिलावटखोरी और बढ़

> **रासायन और ग्लिसरीन युक्त तेल से गुर्दा संबंधी रोग की आशंका रहती है। मिलावटी तेल में मिले हानिकारक तत्व एल्डिहाइड, पालीमर आदि बेहद नुकसानदेह हैं। पालीमर ऐसा तत्व है, जो तले जाने के बाद कार्बोहाइड्रेट के साथ मिलकर कैंसर की कोशिकाएं तक विकसित कर सकता है। वहीं फैटी एसिड हृदय की धमनियों में जमता है, जिससे दिल के दौरे का खतरा बढ़ जाता है। 'ड्राप्सी' से पीड़ित मरीज के शरीर में सूजन के साथ फेफड़ों में पानी जमा होने का खतरा रहता है, जबकि रसायन युक्त तेल लंबे समय तक इस्तेमाल करने से श्वसन तंत्र भी प्रभावित होता है।**

जाती है। महंगाई की वजह से सरसों के तेल में मिलावट की जड़ें देश में मजबूती से फैली हुई हैं। बाजार में नकली सरसों का तेल भी खूब बिक रहा है। पाम आयल, राइस ब्रान, सोया आयल मिलाकर सरसों का तेल बनाया और असली सरसों तेल से तीस-चालीस रुपए कम दामों में बेचा जा रहा है। सस्ते दामों में मिलने वाले इन तेलों की खासियत यह होती है कि इनमें किसी तरह की खुशबू नहीं होती है।

रसायन और ग्लिसरीन युक्त तेल से गुर्दा संबंधी रोग की आशंका रहती है। मिलावटी तेल में मिले हानिकारक तत्त्व एल्डिहाइड, पालीमर आदि बेहद नुकसानदेह हैं। पालीमर ऐसा तत्त्व है, जो तले जाने के बाद कार्बोहाइड्रेट के साथ मिलकर कैंसर की कोशिकाएं तक विकसित कर सकता है। वहीं फैटी एसिड हृदय की धमनियों में जमता है, जिससे दिल के दौरे का खतरा बढ़ जाता है। 'ड्राप्सी' से पीड़ित मरीज के शरीर में सूजन के साथ फेफड़ों में पानी जमा होने का खतरा रहता है, जबकि रसायन युक्त तेल लंबे समय तक इस्तेमाल करने से श्वसन तंत्र भी प्रभावित होता है। ट्राई-आर्थो-क्रेसिल फास्फेट एक मिलावटी तत्त्व है, जो खाद्य तेल के रंग के समान होता है। यह देखने पर आसानी से पकड़ में नहीं आता है। यह तेल में घुलनशील है और इसका स्वाद भी खाद्य तेल से ज्यादा अलग नहीं होता। मिलावटी तेल के सेवन से रक्तचाप, दिल का दौरा, कैंसर जैसी घातक बीमारियों का खतरा बढ़ सकता है। इन बीमारियों से बचाव करना है तो तेल खरीदने से पहले तेल की शुद्धता की पहचान करना जरूरी है।

सरसों के तेल में मिलावट की पहचान करने के लिए इसका 'फ्रीजिंग टेस्ट' किया जा सकता है। इसके लिए एक कटोरी में थोड़ा-सा सरसों का तेल निकाल कर उसे कुछ घंटों के लिए फ्रिज में रख देने और थोड़ी देर बाद इसे बाहर निकाल कर देखा जा सकता है। अगर तेल जमा हुआ दिखाई दे या फिर सफेद दाग दिखने लगे तो समझ जाना चाहिए कि तेल मिलावटी है। बैरोमीटर के जरिए भी असली सरसों के तेल की शुद्धता का पता लगता है। बैरोमीटर का अंक 58 से 60.5 है, लेकिन अगर सरसों तेल की 'रीडिंग' तय मानक से ज्यादा है, तो तेल नकली है। तेल का रंग बदलने का मतलब है कि इसमें मिलावट की गई है। सरसों के तेल को जांचने के लिए अपने हाथों में थोड़ा-सा तेल लेकर उसे अच्छे से मलना चाहिए। अगर तेल से कोई रंग निकलता या किसी रसायन की गंध आती है तो तेल नकली है।

काफी हद तक तेल के बाजार का खेल इसे लेकर किए गए दावों का भी है। कई कंपनियां शुद्ध और सात्त्विक विधि से तेल बनाकर बेचने का दावा करती हैं, जबकि यह दावा अधिकतर मामलों में झूठा निकलता है। वहीं कच्ची घानी के तेल का दावा भी जोर-शोर से किया जाता है, जो अधिकतर मामलों में संदिग्ध होता है। इस तरह के दावों के झांसों में आकर तेल नहीं खरीदना चाहिए। तेल खरीदने से पहले सतर्कता बरतने से ही मिलावटी तेलों से बचा जा सकता है। सस्ते के फेर में पड़ने से बचने की जरूरत है, क्योंकि यह बाद में बहुत महंगा पड़ता है। मिलावटी खाद्य पदार्थ सरकारी महकमों की उदासीनता और लापरवाही के बिना चलता नहीं रह सकता। जरूरत इस बात की ज्यादा है कि सरकार अपने स्तर से तेल की शुद्धता सुनिश्चित करने के लिए बाजार में बेचे जाने वाले तेल की जांच और नकली तेल बेचने वालों के खिलाफ सख्त कार्रवाई करे। साथ ही, मिलावटी तेल सहित सभी खाद्य पदार्थों के असली-नकली होने की पहचान के लिए व्यापक स्तर पर तौर-तरीकों का प्रचार और जागरूकता अभियान चलाने की जरूरत है।

दोस्ती के रंग

लोकेंद्रसिंह कोट

दोस्ती का कोई तय मतलब नहीं होता है और अगर मतलब होता तो दोस्ती होती ही नहीं। दोस्ती इस संसार का ऐसा नाता है जो किसी भी औपचारिकता का मोहताज नहीं है, किसी प्रकार के बंधन का पर्याय नहीं है। अच्छे दोस्त होना मोक्ष पाने के बराबर है। रिश्ते-नाते मुसीबत में साथ तो आते तो हैं, लेकिन उनमें किंतु-परंतु बहुत होते हैं। वहीं दोस्ती सारी किंतु-परंतु से ऊपर होती है। जो कोई आगे-पीछे नहीं सोचता, बस खुशी हो या गम, बगैर बुलाए, बगैर किसी तामझाम के जो आ जाए, वही दोस्त और ईश्वर होते हैं। ऐसा कहते हैं कि दोस्ती हृदय से हृदय का बंधन होता है और सच्चा दोस्त परेशानी आने से पहले ही मौजूद हो जाता है। कुछ लोग अपने दोस्ताना मिजाज के लिए ही बने होते हैं। मित्रता का विज्ञान ही दिल से चलता है, जहां गुणा-भाग, घटाव का स्थान नहीं होता है, सिर्फ जोड़ होता है। इतना ही गणित आता है दोस्तों को। वे एक और एक ग्यारह करना जानते है, दो और दो पांच तो कभी आठ कर देते हैं, पता ही नहीं चलता। रसायन भी इतना ही जानते है कि जो पदार्थ घुलनशील हैं, वे ही दोस्तों को याद रहते हैं। दोस्त नमक की तरह होते हैं। न हों तो खाने का स्वाद ही नहीं रहता है और कहता है, 'तू रख अभी, जब तेरे पास आएगा तब दे देना..।'

दोस्त सिर्फ आवरण को प्रभावित नहीं करते, वे अंतरतम तल तक जाकर वह सब कुछ जानते हैं जो शायद परिवार के लोग भी नहीं जानते। उन्हे तुरंत पता चल जाता है कि दोस्त की इस समय जरूरतें क्या हैं। ऐसा अनुसंधान कहते हैं कि अगर मन में अवसाद है तो वह दोस्तों की संख्या पर निर्भर करता है। 'प्रोसीडिंग्स आफ रायल सोसायटी' जर्नल में प्रकाशित शोध दोस्ती के बारे में नई बात सामने रखता है। शोध में ऐसे दो हजार विद्यार्थियों को शामिल किया गया, जिनमें अवसाद के लक्षण दिखे। सामने आया कि जिन विद्यार्थियों के पास दोस्तों की संख्या बड़ी थी, उनमें अवसाद के लक्षण घटे। इनमें दोगुना तेजी से सुधार की संभावना देखी गई। अमेरिका में हुई एक और शोध के मुताबिक, अकेलापन अवसाद बढ़ाने के साथ सेहत को भी प्रभावित करता है।

दरअसल, दोस्तों का दायरा हमारी उम्र बढ़ाता है और हमें खुश भी रखता है। दोस्ती हमेशा प्रेरणा देती है और हमें एकाकीपन से परे धकेलती है। जहां मौन हो वहां अगर दोस्त हो तो भी वह उस मौन को पढ़ लेता है। वे उन भावनाओं, अपनापन, खुशी, गम सबको पढ़ लेते हैं और वैसे ही सहयोग देने लगते हैं। बचपन के दोस्त तो ऐसे होते हैं जो हमारी रग-रग से वाकिफ होते हैं और हमें चिढ़ाए बगैर नहीं मानते।

ब्रिटिश मानव विज्ञानी और शोधकर्ता राबिन डनबार की शोध कहती है कि एक इंसान डेढ़ सौ से अधिक दोस्तों से दोस्ती नहीं निभा सकता। इनमें से इंसान के दिल के करीब कुछ ही दोस्त होते हैं। सबसे अच्छे दोस्त कितने होते हैं, इस पर राबिन का कहना है कि एक इंसान भले ही डेढ़ सौ दोस्तों के दायरे को निबाह सकता है, लेकिन मात्र पांच दोस्त ही ऐसे होते हैं, जिनसे वह अपनी हर बात साझा कर सकता है। जर्नल 'साइकोलाजिकल साइंस' में प्रकाशित शोध के मुताबिक, जो लड़के बचपन में अपने दोस्तों के साथ ज्यादा वक्त बिताते हैं, जब वे तीस वर्ष के होते हैं तो उनका रक्तचाप और 'बाडी मास इंडेक्स' कम रहता है। अमेरिका की टेक्सास टेक यूनिवर्सिटी के जेनी कंडिफ का कहना है, 'शोध के निष्कर्ष बताते हैं कि शुरुआती जीवन का वयस्क होने पर हमारे शारीरिक स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ता है। बचपन के हमारे दोस्त बड़े होने पर भी हमारी सेहत को फायदा पहुंचाते हैं।'

> **दुनिया मेरे आगे**
>
> **अकेले रहने वाले लोगों के शरीर में कार्टिसोल नाम का तनाव हार्मोन तेजी से बनता है, जिसकी वजह से उन्हें तनाव से जुड़ी समस्याएं होने लगती हैं। वहीं जिन लोगों के पास दोस्त होते हैं, जो ज्यादातर समय दोस्तों के साथ बिताते हैं, उनके तनाव हार्मोन कम हो जाते हैं।**

जीवन में कुछ रिश्ते हमें ऊपर वाला ही बनाकर देता है, लेकिन दोस्ती का रिश्ता हम नीचे आकर स्वयं चुनते हैं। कई शोध में यह सिद्ध भी हो चुका है कि अकेले रहने वाले लोगों के शरीर में कार्टिसोल नाम का तनाव हार्मोन तेजी से बनता है, जिसकी वजह से उन्हें तनाव से जुड़ी समस्याएं होने लगती हैं। वहीं जिन लोगों के पास दोस्त होते हैं, जो ज्यादातर समय दोस्तों के साथ बिताते हैं, उनके तनाव हार्मोन कम हो जाते हैं। वे न सिर्फ बुरे वक्त में काम आते हैं, बल्कि हमें दिमाग से भी तेज बनाते हैं। यह सच है कि जिनके पास दोस्त हैं, वे लोग बाकी लोगों के मुकाबले दिमागी तौर पर ज्यादा जवान और तेज होते हैं। एक शोध के मुताबिक, यादों, भावनाओं और प्रेरणाओं को महसूस करने वाला दिमाग का हिस्सा स्पष्ट रूप से उम्र के साथ प्रभावित होता है। लोगों के दिमाग के इस हिस्से में सामाजिक संबंध संरक्षित रहते हैं।

दरअसल, दोस्ती का एक ही नियम है कि उसका कोई नियम नहीं है। बगैर नियम के जो चले और उसमें चार चांद लगा दे वही दोस्ती का आयाम होता है। वैसे हर दोस्ती अपने आप में एक मिसाल होती है, क्योंकि कोई भी दोस्ती की तुलना दूसरी दोस्ती से नहीं की जा सकती। हर दोस्ती में कुछ नया ही मिलेगा, कुछ अतरंगी मिलेगा। जितने रंग दोस्ती के होते हैं, उतने रंग तो शायद कुदरत ने भी नहीं बनाए हैं।

आस्था और जोखिम

'हादसों के आयोजन' (संपादकीय, 3 जुलाई) पढ़ने से स्पष्ट हुआ कि प्रशासनिक शिथिलता एवं आयोजक की निष्क्रियता के कारण पूर्व में भी ऐसी अनेक हृदयविदारक घटनाएं हुईं और जांच पड़ताल की लीपापोती करके किसी को आज तक दंडित नहीं किया गया। भोली-भाली जनता की भावनाओं से खिलवाड़ करने वाले बाबाओं की कमी नहीं है। वोट की दृष्टि से सरकार ऐसे लोगों की समुचित जांच करने से कतराती है। हाथरस की कारुणिक घटना में पीड़ित परिवारों को क्षतिपूर्ति राशि भी दी जाएगी, लेकिन इसकी पुनरावृत्ति न हो, इसके लिए सरकार कोई योजना बनाएगी, यह यक्ष प्रश्न है। विचारणीय यह भी है कि ऐसे आयोजनों में धर्म-कर्म का उपदेशदाता वह सुनिश्चित क्यों नहीं करते कि भगदड़ की नौबत न आए। संपादकीय निष्कर्ष सत्य की कसौटी पर खरा है कि आखिर ऐसी दुर्घटनाओं को रोकने के लिए सख्त नियम कब बनेंगे और दोषियों पर कार्रवाई की नजीर कब दिखेगी। वर्ष 1954 में प्रयागराज कुंभ मेला में भगदड़ से हजारों लोगों की मृत्यु से सरकार कुछ सीख लेती तो ऐसी दर्दनाक घटना को रोका जा सकता था।

– अशोक कुमार, पटना

जवाबदेही की जरूरत

दिल्ली में मानसून के दौर की हाल की बारिश ने सरकारी तंत्र के दावों को आईना दिखाया है। जलभराव रोकने की सभी योजनाएं कागजी साबित हुईं और वे शायद पानी में बह गईं। दिल्ली के सभी विभाग केवल और केवल दूसरे विभाग को दोषी ठहराने में प्रतियोगिता करते दिखे। मौजूदा सरकार ने पिछले कई साल की बारिश से कोई सबक नहीं लिया। लीपापोती वाली सभी विभागों की बैठकें जारी हैं, मगर इसका हासिल क्या होगा, यह जनता को पता नहीं। अस्पतालों से पानी टपकने, अनधिकृत बस्तियों के पानी में डूबनी की खबरें आ रही हैं। निराश्रितों की रातों की नींद खत्म है। फिर भी प्रशासन सोया हुआ है। सरकार को एक ही तंत्र बनाना होगा, जिसमें सभी विभागों के अधिकारियों के साथ साथ आपदा मोचन बल को भी शामिल करना चाहिए। लापरवाह अधिकारियों की जवाबदेही तय करनी होगी। तभी दिल्ली सुरक्षित रहेगी।

– आरके शर्मा, दिल्ली

राष्ट्र सबसे ऊपर

आए दिन देखा जाता है कि राजनीतिक पार्टियों के बीच आपस में मनमुटाव और छद्म-युद्ध का माहौल बना रहता है। लोग चाहे विपक्ष के हों या फिर सत्ता पक्ष के, एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप, अनर्गल और बेसिर-पैर की बातों पर ही अपनी पूरी ताकत, क्षमता और सामर्थ्य का प्रदर्शन करते रहते हैं। यह सच है कि लोकतंत्र में सभी को अपनी बात, अपनी तरह से कहने की काफी स्वतंत्रता मिली हुई है, लेकिन कुछ नीति-निर्देशक सिद्धांत, अनुशासन, प्रतिबद्धताएं और कुछ सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक आचरण हैं। आम जनता समझती है, लेकिन वह बेबस है कि वह खुलकर ऐसी बातों का खुले मंच से प्रतिकार नहीं कर सकती। मगर ओछी राजनीति करने वालों को यह नहीं भूलना चाहिए कि जनता का भी कभी-कभी वक्त आता है और जब जनता उठ खड़ी होती है तो बड़े-बड़े सिंहासन हिल उठते हैं।

– रतन कुमार श्रीवास्तव 'रतन', लखनऊ

बाढ़ के रास्ते

मानसून के आगमन के साथ ब्रह्मपुत्र नदी और उसकी सहायक नदियां अपने तटों से उफन कर आसपास के क्षेत्रों में फैल जाती हैं, जिससे व्यापक तबाही मचती है। इस गंभीर समस्या से निपटने के लिए सबसे पहले एक व्यापक और तकनीकी रूप से उन्नत पूर्व चेतावनी प्रणाली का विकास आवश्यक है। दीर्घकालिक समाधानों के रूप में नदी के किनारों को मजबूत करना, बांधों और जलाशयों का निर्माण और बेहतर जल निकासी प्रणाली का विकास आवश्यक है। वनों की कटाई को रोकना और वृक्षारोपण को बढ़ावा देना चाहिए, जो जल धारण क्षमता में सुधार करेगा। कृषि क्षेत्र में, बाढ़ प्रतिरोधी फसलों और तकनीकों को प्रोत्साहित करना चाहिए। किसानों को बीमा और वित्तीय सहायता प्रदान की जानी चाहिए। शहरी क्षेत्रों में बाढ़ के मैदानों में अनियंत्रित विकास को रोका जाना चाहिए। जन जागरूकता भी महत्त्वपूर्ण है।

– चंदन कुमार नाथ, बरपेटा, असम

विचार

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। शुक्रवार, 12 जुलाई 2024

कानून को मिला तेवर

मुस्लिम महिलाओं के गुजारा भत्ते से जुड़े एक मामले में बुधवार को आया सुप्रीम कोर्ट का अहम फैसला न सिर्फ इस जटिल मुद्दे पर प्रगतिशीलता की रोशनी डालता है बल्कि समाज में बराबरी की हैसियत के लिए जूझतीं महिलाओं को ताकत देता है। शीर्ष अदालत ने इस फैसले के जरिए बताया है कि सही ढंग से व्याख्या करके पुराने कानूनों को भी नया तेवर दिया जा सकता है।

AI Image

गुजारा भत्ता: SC का फैसला

गुजारा भत्ता | मामला मूलतः मुस्लिम महिलाओं को गुजारा भत्ता देने के सवाल से जुड़ा था जो देश में मजहब, कानून और राजनीति से जुड़ा एक जटिल मसला रहा है। अस्सी के दशक में चर्चित हुआ शाहबानो मामला आज भी इन तीनों हलकों की चर्चा में उठता रहता है। उस मामले में सुप्रीम कोर्ट के प्रगतिशील फैसले को संसद से नया कानून बनवाकर पलटने की कोशिश तत्कालीन सरकार ने की थी। लेकिन तब से अब तक न सिर्फ राजनीति बल्कि समाज का स्वरूप भी बदल चुका है।

बदला माहौल | अब न तो राजनीति उस तरह के आग्रहों से संचालित होती दिखती है और न समाज। महिलाएं अब उन आग्रहों को बर्दाश्त करने को तैयार नहीं हैं, जिनके दबाव में राजीव गांधी सरकार ने शाहबानो केस के फैसले को पलटने का निर्णय किया था। इसकी तसदीक इस बात से भी होती है कि सुप्रीम कोर्ट के ताजा फैसले को राजनीति की एक धारा राजीव सरकार के उस फैसले से जोड़कर देख रही है, तो दूसरी धारा इससे असहज महसूस कर रही है।

बराबरी का संदेश | यह बात भी दुरुस्त है कि सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले को मुस्लिम महिलाओं तक सीमित मानना इसकी संभावनाओं को कम करके देखना होगा। शीर्ष अदालत ने स्पष्ट व्यवस्था यह दी है कि चाहे महिला किसी भी धर्म-संप्रदाय की हो, उसकी शादी और तलाक की विधि चाहे जो भी रही है, वह सीआरपीसी की धारा 125 के प्रावधानों के तहत गुजारा भत्ता देने की मांग कर सकती है।

महिलाओं को ताकत | स्पष्ट रूप से यह महिला सशक्तीकरण की दिशा में उठाया गया एक बड़ा कदम है। सुप्रीम कोर्ट ने इस फैसले के जरिए महिलाओं को आहसास कराया है कि चाहे शादी में रहते हुए खुद को सशक्त महसूस करने की बात हो या परिवार के दायरे से निकलने के बाद अपना हक सुनिश्चित करने की, देश के कानून की शक्ति उनके साथ है। ऐसा मानने का आधार यह है कि सुप्रीम कोर्ट ने इस फैसले के जरिए न्याय व्यवस्था को यह संदेश भी दिया है कि कानून को लागू करते हुए और इसकी व्याख्या करते हुए स्त्री-पुरुष समानता और कमजोर तबकों के हितों की सुरक्षा जैसे मूल्यों को ध्यान में रखने की जरूरत है।

रोज़-ब-रोज़

दर्द न जाने कोए

शैलेंद्र पांडेय

'**रुको... रुक** जाओ... अरे लखनऊ पार करा दोगे क्या?' दाएं से कार गुजर रही थी और बाएं से बाइक वालों का रेला। बीच में आंटो वाला फर्राटा भर रहा था। निशांतगंज फ्लाईओवर की चढ़ाई शुरू ही होने वाली थी कि आंटो में बैठी एक महिला ने आदेश सुना दिया। वह चाहती थीं कि जब पहली बार उन्होंने कहा कि आंटो रोक दो, तो बस उसी क्षण, जहां जैसे वाली स्थिति में ड्राइवर को ब्रेक मार देने चाहिए थे। ट्रैफिक के महासागर में आंटो को खेवते-खेवते किनारे तक पहुंचने में वह वाली जगह सौ कदम पीछे छूट गई, जहां पहली बार 'रुको' का स्वर गूंजा था। 50 के नोट में से किराया काटकर बाकी रकम लौटाने के बीच में ड्राइवर ने न जाने कितने उलाहना सुन लिए। उसने पहले थोड़ा लड़ने का प्रयास किया, 'अरे मैडम, बीच रास्ते में कैसे रोक देते? पीछे वाले ठोक जाते। आप पहले बता देतीं।' लेकिन, उसे फौरन ही ज्ञान हो गया कि इस लड़ाई में परिणाम केवल हार ही है, तो उसने हथियार गिरा दिए। पराजय के बाद उसने आगे वाली सीट पर बगल में बैठी सवारी की ओर देखकर कहा, 'देख रहे हो भैया!' कातर भाव से कहे गए इस वाक्य में गुहार थी समर्थन भरे दो शब्दों की, लेकिन भैया क्या ही देखते।

आंटो वालों का संकट कोई देखता नहीं, लेकिन होता बहुत बड़ा है। इसमें ई-रिक्शा चालकों को भी जोड़ लीजिए। तमाम सवारियां का बस चलता तो वे घर की दूसरी मंजिल तक आंटो लेकर चली जातीं। चूंकि यह वाला बस चल नहीं सकता, तो आंटो को यथासंभव वहां तक ले जाने की कोशिश होती है, जहां से फिर आगे पैर कम से कम चलाने पड़े। इसी जुगाड़ में कुछ सवारियां तब तक नहीं बतातीं कि उन्हें उतरना कहां है, जब तक कि उतरने वाली जगह बिल्कुल पैरेलल नहीं आ जाती। अगर पहले बता दिया और आंटो वाले ने पहले ही रोक दिया तो!

किसी और शहर के आंटो वालों की समस्या सुनकर शायद सहानुभूति न जगे, लेकिन लखनऊ की बात अलग है। अदब और तहजीब पीछा कहां छोड़ती है यहां, ड्राइवरों का भी। न सहा जाता है और न कहा जाता है। नर्म मिजाजी कुछ बोलने से रोक देती है। कुछ आंटो वालों ने इस मामले में हाइब्रिड मोड डिवेलप कर लिया है। वे जवाब देते हैं, लेकिन जी-हुजूर वाले अंदाज में। सिकंदरबाग चौराहे पर एक लाइन से चार लोग खड़े थे। एक आंटो बगल में रुका और ड्राइवर ने पूछा, 'कहां चलेंगे?' कोई जवाब नहीं। ड्राइवर को लगा कि उसकी बात शायद पहुंची नहीं। उसने सिर बाहर निकाला और फिर सवाल दोहराया, 'कहां चलना है?' इस बार भी चुप्पी। ड्राइवर ने ब्रेक से पैर हटाया, एक्सीलेटर घुमाया और खुद से बात की, 'ये लोग 26 जनवरी की परेड देखने के लिए खड़े हैं।'

एकदा

सहनशीलता का असर

एक बार स्वामी दयानंद सरस्वती फर्रुखाबाद गए। वहां गंगा नदी के किनारे उन्होंने अपना आसन जमाया। पास ही एक झोपड़ी में एक साधु रहता था। स्वामीजी को वहां देखकर उसे ईर्ष्या हुई। वह रोजाना उनके पास जाकर उन्हें भला-बुरा कहने लगा। यहां तक कि वह गालियां भी देता। स्वामीजी पर उसके इस दुर्व्यवहार का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह उस पर सदा मुस्कुराते रहते। एक दिन स्वामीजी का एक भक्त उनके लिए फलों का टोकरा लेकर आया और बड़े सम्मान के साथ उन्हें भेंट किया। स्वामीजी ने टोकरे में से कुछ अच्छे-अच्छे फल निकाले और एक शिष्य को देकर पास में रहने वाले साधु को भेंट करने भेज दिया। शिष्य फल लेकर साधु के पास पहुंचा और कहा, 'ये फल स्वामीजी ने आपके लिए भेजे हैं, स्वीकार कीजिए।' दयानंद सरस्वती का नाम सुनते ही वह साधु आगबबूला हो गया और बोला, 'सबेरे-सबेरे किस पाखंडी का नाम ले लिया तुमने। लगता है आज तो मुझे भोजन भी नहीं मिलेगा। जाओ, ये फल किसी और को देने के लिए कहे होंगे।' शिष्य ने स्वामीजी के पास आकर सारी बात बता दी। स्वामीजी ने शिष्य को लौटाते हुए कहा, 'जाओ, उनसे कहो कि आप उन पर प्रतिदिन जो अमृत वर्षा करते हैं, उससे आपकी पर्याप्त शक्ति नष्ट होती है। इसलिए आप इनका रसास्वादन करें, ताकि आपकी शक्ति बनी रहे।' शिष्य ने स्वामीजी का संदेश ज्यों का त्यों साधु को सुना दिया। इसे सुनते ही मानो उस साधु पर घड़ों पानी पड़ गया। उसे बड़ा पश्चाताप हुआ। वह तुरंत स्वामीजी के पास आया और गिड़गिड़ाते हुए बोला, 'क्षमा करें, मैं तो आपको साधारण मनुष्य समझता था, पर आप तो देवता निकले।' स्वामीजी ने उसे गले लगा लिया।

संकलन : **रमेश जैन**

Subrata Dhar

कला जगत AI से इतना डर क्यों रहा है

कलाकारों को कानूनों से नहीं मिल पा रहा संरक्षण, करने होंगे जोड़-घटाव

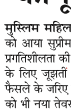

विराग गुप्ता

अमेरिका के कई राज्यों में आवाज के अनधिकृत इस्तेमाल पर विस्तृत कानून होने के बावजूद हॉलिवुड की स्कारलेट जॉनसन जैसी हस्तियों को मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। AI की दुनिया में वॉयस क्लोनिंग के लिए डेटा और अल्गोरिदम का बड़े पैमाने पर इस्तेमाल होता है। भारत में डेटा और एल्गोरिदम से जुड़े मामलों में ऐप जैसी इंटरमीडियरी और सोशल मीडिया कंपनियों की जवाबदेही तय करने के लिए डिजिटल इंडिया बिल पर बहस हो रही है। प्रभावी कानून और नियम संसद से पारित होने के पहले इन मामलों में सेलिब्रिटीज को भारत में कानूनी सुरक्षा मिलना टेढ़ी खीर है।

संविधान में प्रावधान | अनुच्छेद-19 (1) (a) में अभिव्यक्ति की आजादी और 21 में निजता का अधिकार दिया गया है। भरोसेमंद AI के विस्तार के लिए हामी भरते हुए भारत GPAI का सदस्य बना है। सुप्रीम कोर्ट के 9 जजों की बेंच ने 2017 में पुट्टास्वामी फैसले में प्राइवेसी के संवैधानिक अधिकार को मान्यता दी थी। उस फैसले के अनुसार संसद से कानूनी व्यवस्था अभी तक नहीं बनी।

कहां कम पड़ रहे कानून

- AI को कानूनी पहचान न मिलने से मुश्किल
- नहीं दिए जा सकते हैं कॉपीराइट के अधिकार
- कानून का हिस्सा बनें डिजिटल दुनिया के शब्द

कॉपीराइट के कानून | इंटेलेक्चुअल प्रॉपर्टी राइट्स (IPR) के तहत विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (WIPO) के कानून मानवीय सृजनात्मकता पर आधारित हैं। भारत में कॉपीराइट कानून 1957 में बनाए गए। इनके तहत मौलिक साहित्य, थियेटर, संगीत, फिल्म, साउंड रिकॉर्डिंग और कलात्मक कार्यों पर सर्जक को कानूनी सुरक्षा मिलती है। इन कानूनी का मुख्य मकसद लेखक या सृजक को सही मान्यता और भुगतान का अधिकार दिलाना है। कानून की धारा-17-बी में व्यक्तित्व के अनधिकृत इस्तेमाल के बारे में प्रथम लेखक या मालिक को अधिकार दिए गए हैं। राहत हासिल करने के लिए दो बातों को साबित करना जरूरी है, पहला अनधिकृत इस्तेमाल और दूसरा डिसीव करना यानी छलना। लेकिन वॉयस क्लोनिंग का मसला पूरे व्यक्तित्व से जुड़ा है, जिस बारे में कॉपीराइट कानून में समुचित सुरक्षा हासिल नहीं है।

ट्रेडमार्क की मुश्किल | ट्रेडमार्क कानून का मकसद किसी प्रॉडक्ट की गुणवत्ता और उसके स्रोत को सुनिश्चित करना है। लेकिन सभी क्षेत्रों और वर्गों में ट्रेडमार्क का रजिस्ट्रेशन कराना कानूनी तौर पर बहुत ही मुश्किल है। ट्रेडमार्क कानून की धारा-2 (m) में मार्क को नाम और सिग्नेचर के तौर पर ही परिभाषित किया गया है। कानून के दायरे में आवाज, इमेज और व्यक्तित्व के दूसरे पहलू स्पष्ट तौर पर शामिल नहीं हैं। ट्रेडमार्क कानूनी का मुख्य मकसद व्यावसायिक प्रतिद्वंद्वियों पर रोक लगाना है, जबकि AI के माध्यम से वॉयस क्लोनिंग आदि का व्यक्तियों के बजाए सार्वजनिक इस्तेमाल हो रहा है। इससे प्रत्यक्ष तौर पर व्यावसायिक लाभ को साबित करना मुश्किल है। AI के सृजन में पारदर्शिता के अभाव से रचना में नकल और स्वतंत्रता का वर्गीकरण करना कठिन है।

अदालती फैसले | डीएम एंटरटेनमेंट कंपनी के केस में अदालत ने 1996 में दलेर मेहंदी के रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क को मान्यता दी थी। 2012 में टाइटन इंडस्ट्रीज बनाम राजकुमार जूलर्स केस में दिल्ली हाईकोर्ट ने सिलेब्रिटी को कानूनी तौर पर परिभाषित किया। उस फैसले के अनुसार फिल्म जगत के अनेक दिग्गजों को हाईकोर्ट से राहत मिली। वहीं, अमेरिका में 1890 में सैम्युअल वॉरन और लुईस ब्रांडेस ने हार्वर्ड लॉ रिव्यू में प्राइवेसी के अधिकार पर पेपर का प्रकाशन किया था। इसके बाद न्यू यॉर्क में 1903 में कानून बने। साल 1953 में, अदालत के अहम फैसले में प्राइवेसी और पब्लिसिटी के कानूनी अधिकारों के फर्क को दर्शाया गया।

कानूनी जटिलताएं | वॉयस क्लोनिंग जैसे मामलों में बड़े सिलेब्रिटीज के अधिकार और मुनाफे शामिल रहते हैं, जिनका आम जनता से ज्यादा ताल्लुक नहीं है। डेटा और अल्गोरिदम को AI की तकनीक से नया प्रॉडक्ट बनाया जाता है। डेटा का स्वामित्व किसके पास है, इस बारे में दो दशकों से TRAI और DoT में बहस चल रही है। AI को कानूनी पहचान नहीं मिलने की वजह से उस पर आईपीआर के कानून लागू करना मुश्किल है।

नए कानून की जरूरत | डेटा के बेजा इस्तेमाल पर सख्ती होने से फिल्म उद्योग में संगीत, स्टोरी, फैंटेसी, चित्रण आदि पर रोक लग सकती है। मर्ज के मूल कारण में गए बगैर वॉयस क्लोनिंग जैसे मामलों में कानूनी सुरक्षा और उपचार हासिल करना मुश्किल है। गाड़ी को पटरी में लाने के लिए अल्गोरिदम, मशीन लर्निंग, न्यूरल नेटवर्क और वर्चुअल रियल्टी जैसे शब्दों को कानून की किताबों में विस्तार से समझाना होगा। डेटा, तकनीक, निर्माता, ऐप और सोशल मीडिया प्लैटफार्म - सभी के लिए सख्त कानूनी प्रावधान आने के बाद ही वॉयस क्लोनिंग जैसे मामलों पर भारत में सिलेब्रिटी को समुचित राहत मिल सकती है।

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

आमने-सामने

आर्टिफिशल इंटेलिजेंस का है ज़माना नई चुनौती मानें तो निकलेगा रास्ता

दुष्यन्त

एक आम धारणा सी बनती दिख रही है कि AI रचनात्मकता और रचनात्मक लोगों के लिए खतरनाक है। जब इलॉन मस्क ने कहा कि संभावनाएं हैं कि आर्टिफिशल इंटेलिजेंस मानवता को नुकसान पहुंचाए, तो खबर बननी ही थी। कलाओं और खासकर लेखन की दुनिया के लिए AI के प्रभाव बहुस्तरीय प्रतीत होते हैं।

कलाकारों पर असर | महामारी के असर से रचनात्मक दुनिया अभी उबर भी नहीं पाई थी कि आर्टिफिशल इंटेलिजेंस ने संकट को विकराल बना दिया। विकराल होना वास्तविकता कम और नासमझी ज्यादा हो सकती है। अगर सिनेमा की बात करें तो दो प्राथमिक असर अभिनेताओं और लेखकों पर दिख रहा है। राइटर्स गिल्ड ऑफ अमेरिका ने जब कुछ समय पहले लेखकों के लिए AI के खतरे को लेकर हड़ताल की घोषणा की थी, तब दुनिया ने इस ओर ध्यान दिया।

न राइटर, न एक्टर | AI को शुद्ध रूप से खतरा मानने वाले लोगों का कहना है कि इससे किसी वेब सीरीज का अगला सीजन बनाना बहुत आसान हो जाएगा। न लेखक की जरूरत होगी और न अभिनेताओं की। आशंका है कि अगले तीन-चार बरसों में यह असर दिखने लग जाएगा।

चिंता का विषय | लेखक के रूप में मुझे शुरु में AI से संकट महसूस नहीं हुआ, पर अब होने लगा है। पहले लग रहा था कि मानवीय मस्तिष्क तो असीम है, उसका मुकाबला कोई मशीन या टेक्नॉलजी कैसे कर सकती है। फिर लगा कि नहीं, यह कहना जल्दबाजी होगी, सरलीकरण होगा। यह संभव है कि मेरा सोचना पूरी तरह से सही नहीं था। प्रफेशनल लेखकों के लिए आर्टिफिशल इंटेलिजेंस वास्तव में चिंता का विषय तो है।

AI Image

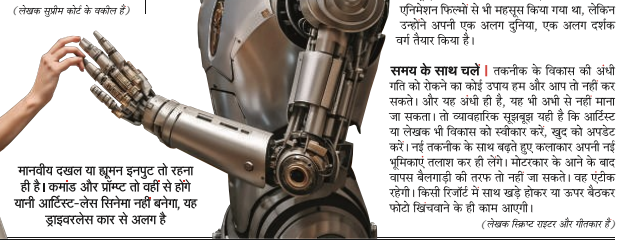

मानवीय दखल या ह्यूमन इनपुट तो रहना ही है। कमांड और प्रॉम्प्ट तो वहीं से होंगे यानी आर्टिस्ट-लेस सिनेमा नहीं बनेगा, यह ड्राइवरलेस कार से अलग है

बदलाव के साथ | एक व्यावहारिक पक्ष यह भी है कि हम इसे खतरे के बजाय चुनौती मान लें, क्योंकि तकनीकी बदलाव तो होंगे ही। कलाएं तकनीकी विकास की चुनौतियों से निखरी हैं। जब सिनेमा एनालॉग से डिजिटल में बदल रहा था, तो इंडस्ट्री के बहुत-से लोगों ने विरोध किया। इनमें डीओपी, तकनीशियन वगैरह थे। उन्हें डर था कि उनका रोजगार छिन जाएगा।

हर काल में चुनौती | चुनौतियों का सामना करते हुए हर कलाकार को याद रखना चाहिए कि सिनेमा कविता लिखना नहीं है, यह एक संपूर्ण मनोरंजन है। यह व्यापक इकाई है और तकनीक भी उस व्यापक इकाई का हिस्सा है। AI उसी का विस्तार है। लाजिम है कि परिवर्तन के प्रभाव जल्दी दिखेंगे। कलाओं के सामने प्रक्रियागत खतरे हर काल में आते रहे हैं। कलाएं फिर भी चुनौतियों को मानकर आगे बढ़ती रही हैं। क्या कैमरे की तस्वीरों ने पेंटिंग्स को कोई कम चुनौती दी थी? बैलगाड़ियों से जब दुनिया मोटर कार पर आई, तो वह बदलाव भी बहुत बड़ा ही था।

AI कैसे कम करेगा मुश्किलें

- तकनीक के साथ अपडेट होने में फायदा
- AI से प्रॉडक्शन डिजाइन में बेहतरी
- ईसानी दखल की जरूरत बनी रहेगी

सकारात्मक असर | अभी सिनेमा में प्राथमिक रूप से डबिंग का काम प्रभावित हुआ है। डबिंग आर्टिस्ट का काम लगभग खत्म होने के कगार पर है। AI का दूसरा बड़ा उपयोग रचनात्मक सलाह लेने में हो रहा है और यह बढ़ेगा। मुझे लगता है कि आने वाले समय में आर्टिफिशल इंटेलिजेंस का इस्तेमाल प्रॉडक्शन डिजाइन में बहुत होगा और यह अधिक प्रामाणिक होगा। उदाहरण के लिए, AI से कहा जाएगा कि हमें 1980 का समय दिखाना है, तो यहां हमें बहुत अच्छा परिणाम मिल सकता है। इसका मतलब कि 'मोहेनजोदड़ो' और 'हीरामंडी' पीरियड को पोट्टे करने के लिहाज से AI की मदद से कहीं बेहतर परिणाम मिलेंगे।

जरूरत बनी रहेगी | सेट, प्रॉडक्शन, कॉस्ट्यूम आदि में AI अच्छे बदलाव लाएगा। लेकिन मानवीय दखल या ह्यूमन इनपुट तो रहना ही है। कमांड और प्रॉम्प्ट तो वहीं से होंगे यानी आर्टिस्ट-लेस सिनेमा नहीं बनेगा, यह ड्राइवरलेस कार से अलग है। इसी तरह का खतरा एनिमेशन फिल्मों से भी महसूस किया गया था, लेकिन उन्होंने अपनी एक अलग दुनिया, एक अलग दर्शक वर्ग तैयार किया है।

समय के साथ चलें | तकनीक के विकास की अंधी गति को रोकने का कोई उपाय हम और आप तो नहीं कर सकते। और यह अंधी ही है, यह भी अभी से नहीं माना जा सकता। तो व्यावहारिक सूझबूझ यही है कि आर्टिस्ट या लेखक भी विकास को स्वीकार करें, खुद को अपडेट करें। नई तकनीक के साथ बढ़ते हुए कलाकार अपनी नई भूमिकाएं तलाश कर ही लेंगे। मोटरकार के आने के बाद वापस बैलगाड़ी की तरफ तो नहीं जा सकते। वह एंटीक रहेंगी। किसी रिजॉर्ट में साथ खड़े होकर या ऊपर बैठकर फोटो खिंचवाने के ही काम आएगी।

(लेखक स्क्रिप्ट राइटर और गीतकार हैं)

क्या है ईरानी 'सुधारवाद' की हकीकत

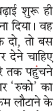

मरियम असलानी

मसूद पेजेश्कियान जब ईरान के नए राष्ट्रपति चुने गए, तो दुनिया के ज्यादातर अखबारों और मीडिया संस्थानों ने बताया कि एक सुधारवादी को जीत मिली है। हालांकि ईरान की जनता को पता है कि यह गलत है। वहां के लोग इस्लामी गणराज्य की चालों से लंबे समय से परिचित हैं। अगर बाकी देश कोई गंभीर गलती नहीं करना चाहते, तो उन्हें कुछ बातों पर गौर करना चाहिए।

AI Image

कॉमन रूम

राष्ट्रपति बस मोहरा | ईरान में लोकतंत्र नहीं है। राष्ट्रपति पद के सभी उम्मीदवारों की जांच एक गार्जियन कांउसिल करती है। यह कांउसिल धार्मिक न्यायविदों की एक सभा है। इस सभी की नियुक्ति प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सुप्रीम लीडर द्वारा की जाती है। देश की स्टैटिजी और पॉलिसी को सुप्रीम लीडर ही नियंत्रित करते हैं, राष्ट्रपति नहीं।

सुधारवादी अलग नहीं | मसूद इस पद के पात्र केवल इसलिए हैं, क्योंकि उन्होंने सर्वोच्च नेता अली खामेनेई के प्रति अपनी वफादारी प्रदर्शित की है। तथाकथित सुधारवादी कोई अलग नहीं हैं। उनके विचार ज्यादातर कट्टरपंथियों से मिलते हैं। मसूद पेजेश्कियान खुद भी अनिवार्य हिजाब के समर्थक रहे हैं। उन्होंने शिक्षा और स्वास्थ्य में लैंगिक भेदभाव को बढ़ावा दिया है। वह हमास और हिज़बुल्लाह जैसे चरमपंथी समूहों के समर्थक हैं।

जनता समझदार | तथाकथित सुधारवादियों ने शासन के 45 वर्षों में से 24 वर्षों तक राष्ट्रपति पद संभाला है। ऐसे में ईरानियों को समझ आ गया है कि हकीकत में इन दोनों गुटों के बीच कोई अंतर नहीं। इन गुटों का अस्तित्व केवल इसलिए है ताकि लोगों को यह भरोसा दिलाया जा सके कि व्यवस्था के भीतर विविधता है, इसलिए परिवर्तन हो सकता है और किसी राष्ट्रीय क्रांति की जरूरत नहीं है। इसी वजह से ईरान की जनता लंबे समय से यह तय कर चुकी है कि उसे इस नाटक में भाग नहीं लेना चाहिए। जो झूठे विकल्प पेश किए जा रहे हैं, उसमें शामिल होने से शासन को और मजबूती ही मिलेगी और उसका पतन देर से होगा।

वोटिंग की हकीकत | जनता ने इस बार चुनाव का सामूहिक बहिष्कार किया। ईरान के लोगों ने सोशल मीडिया पर खाली वोटिंग बूथ के विडियो डाले। इससे जाहिर होता है कि वोटिंग का सरकारी आंकड़ा 49.8% पूरी तरह काल्पनिक है। हालांकि हम वास्तविक आंकड़ा नहीं जान सकते।

बिगड़ते रिश्ते | इस्टैब्लिशमेंट को पता है कि मसूद पेजेश्कियान की भारी भरकम जीत से ईरान की जनता प्रभावित नहीं होगी, क्योंकि उसने तो मतदान ही नहीं किया। देश के भीतर रिजीम अलग-थलग पड़ चुकी है और इसी वजह से वह अंतरराष्ट्रीय समुदाय के साथ अपने संबंधों को सुधारने के लिए बेताब है। ये संबंध भी खतरे में हैं। पिछले महीने अमेरिका के साथ मिलकर कनाडा ने इस्लामिक रिवॉल्यूशनरी गार्ड कोर (IRGC) को आतंकी समूह के रूप में लिस्ट कर दिया। IRGC ईरानी शासन के अधिकार का केंद्र है। कई यूरोपीय देश भी यूरोपीय संघ पर इसी तरह का कदम उठाने के लिए दबाव डाल रहे हैं।

सुधारवाद की मजबूरी | ईरान का शासन चिंतित है कि अगर डॉनल्ड ट्रंप राष्ट्रपति बन जाते हैं, तो बाइडन की तुलना में अमेरिका अधिक दबाव बनाने लगेगा। कई रिपब्लिकन का मानना है कि मिडिल ईस्ट में शांति का सबसे सीधा रास्ता है हमास और हिजबुल्लाह के ईरानी समर्थन को खत्म करना। साथ ही, इराक, सीरिया, लेबनान, यमन और अन्य जगहों पर इस्लामी गणराज्य की हिंसा को बढ़ने से रोकना। इन्हीं सब वजहों से शासन ने 'सुधारवादी' राष्ट्रपति को मैदान में उतारने का फैसला किया। दुनिया के साथ संवाद की उत्सुकता दिखाकर ईरान अपने मंसूबों के लिए वक्त निकालना चाहता है।

समर्थन बंद हो | ईरानी शासन ने खुद को सुरक्षित करने के लिए 'सुधारवादियों ने चुनाव जीता है' वाली कहानी गढ़ी है। अगर इस बदलाव के आधार पर विदेशी सरकारें इस ईरानी शासन के लिए अपने दरवाजे खोलती हैं, तो वे ईरान की जनता के लिए खतरा बढ़ाएंगी। ईरान को किसी भी तरह का समर्थन बंद कर देना चाहिए। अब समय आ गया है कि इस्लामी गणराज्य के बाद के ईरान की कल्पना की जाए।

(लेखिका येल यूनिवर्सिटी में Marie Curie fellow हैं)

प्रकृति की पाठशाला से हम सीखते हैं जीने का ढंग

सलिल पांडेय

व्यक्तित्व से लेकर हमारी उपलब्धियों की तुलना पशु-पक्षियों से की जाती है। हिम्मती और साहसी व्यक्ति को शेर-दिल कहा जाता है। जिसके लिए इस शब्द का प्रयोग होता है, उसे अच्छा भी लगता है। हालांकि किसी को भेड़िया, लोमड़ी, सूअर, बिल्ली, बैल, कुत्ता और गधा आदि कहा जाए तो उसे सिर्फ बुरा ही नहीं लगेगा, हो सकता है मारपीट की नौबत आ जाए। हौसलों की उड़ान की बात करते समय पक्षियों की तरह अनंत आकाश में उड़ने की प्रेरणा दी जाती है। सुंदर आंखों के लिए मृगनयनी, सधी हुई चाल के लिए हंस चाल की संज्ञा दी जाती है। 'काग चेष्टा, बको ध्यानं, श्वान निद्रा तथैव च, अल्पाहारी, गृहत्यागी, विद्यार्थी पंचलक्षणम्' श्लोक में सारे पशु-पक्षियों से ही प्रेरणा के सूत्र जुड़े हैं।

जिस तरह से सृष्टि में पशु-पक्षियों के गुण-अवगुण पर इतना गहरा ध्यान दिया गया है, वैसे ही वक्त आने पर इन पशु-पक्षियों की तरह सच में जीने की आदत डाल ली जाए तो कई उलझनों, कई समस्याओं से मुक्ति मिल सकती है। लोग इस बात से दुखी होते हैं कि किसी ने उनके साथ विश्वासघात कर दिया। स्वाभाविक है कि जहां विश्वास होगा, वहीं घात-आघात किया जा सकेगा। हो भी रहा है कि स्वार्थ के दौर में पहले नजदीकियां की जाती हैं और मौका पाकर कोई एक पक्ष किसी बात को लेकर दूसरे पक्ष के साथ गड़बड़ी कर देता है। इसे विश्वासघात कहा गया है। इस संबंध में कथाकार सुदर्शन की कहानी 'हार की जीत' का उल्लेख प्रासंगिक होगा।

खड़ग सिंह नाम के डाकू को बाबा भारती के घोड़े सुलतान को देखकर लालच आ गया। किस प्रकार घोड़ा हासिल हो, इसके लिए खड़ग सिंह ने प्लानिंग की और सड़क किनारे अपाहिज बनकर बैठ गया। बाबा भारती घोड़े पर सवार होकर जा रहे थे। खड़ग सिंह को सहारा दिया। कुछ दूर जाने के बाद खड़ग सिंह ने बाबा भारती को धक्का दे दिया। बाबा भारती गिर पड़े और खड़ग सिंह घोड़ा लेकर भागने लगा। यहां महत्वपूर्ण बात यह है कि भागते हुए खड़ग सिंह से बाबा भारती ने कहा, 'यह सब बात किसी से न कहना खड़ग सिंह, वरना अपाहिजों पर से लोगों का विश्वास खत्म हो जाएगा।

इस प्रसंग का मुख्य और महत्वपूर्ण पहलू यह है कि जिस घोड़े सुलतान को बाबा भारती बच्चे की तरह पालते थे, वह घोड़ा उनके हाथ से निकल गया तो वह मायूस होकर विलाप नहीं करने लगे। किसी भी विपरीत परिस्थिति के लिए विलाप करने से कुछ हासिल तो नहीं होता बल्कि ऊर्जा का क्षरण अवश्य होता है। पशु-पक्षियों से सबक और सीख लेने से लाभ यह है कि पशु-पक्षी आपस में बदला नहीं लेते। किसी एक पशु-पक्षी का हिस्सा दूसरे ने झपट्टा मारकर खा लिया तो वह मायूस और डिप्रेस नहीं होता। यहां मुख्य बात यह है कि पशु-पक्षियों से सीख लेने का मतलब पशु-पक्षी बन जाना नहीं, बल्कि उनकी बिंदास रहने की आदते अपनाना है।

संसार है तो इसमें छीना-झपटी और मारकाट तो रहेगी ही। हर युग में विश्वासघात, धोखा, कपट, अनाचार रहा है। इससे जो ऊपर उठ गया, समय उसकी बंदगी करता है और उसका यशोगान सदियों तक होता रहता है। मन नाजुक है तो मजबूत भी है। यह तो खुद के हाथ में है कि उसे किस कैटेगरी का रखा जाए!

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

hindi.speakingtree.in

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

■ **आतंक का खाता**

11 जुलाई का संपादकीय 'आतंकियों के मंसूबे' पढ़ा। इस साल जम्मू क्षेत्र में छह बड़ी आतंकी वारदातें हो चुकी हैं। इनमें ज्यादातर हमले रियासी क्षेत्र में तीर्थयात्रियों पर हुए। यह चिंताजनक है कि कश्मीर के बाद अब जम्मू को भी निशाना बनाया जा रहा है। यह रीजन आमतौर पर शांत समझा जाता रहा है। चिंता की बात यह भी है कि आतंकी फिर से अपनी जड़ें जमाने और लोगों में खौफ पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि आतंकियों को किसी न किसी स्तर पर लोकल सपोर्ट मिला हो। लोगों को आतंकवाद के खिलाफ जागरूक करने और उनमें सिस्टम के प्रति भरोसा जगाने की जरूरत है।

प्रेरणा जैन, ईमेल से

■ **बेकार का टकराव**

यह पत्र 10 जुलाई के लेख 'एतराज की राजनीति से नहीं बनेगी बात' से संबंधित है। राष्ट्रहित में पक्ष और प्रतिपक्ष, दोनों को सकारात्मक नजरिया रखने की जरूरत है। संवेदनशील मुद्दों पर संयम बरतते हुए वक्तव्य देना चाहिए। पीएम नरेंद्र मोदी की रूस यात्रा पर कांग्रेस ने जिस तरह से निशाना साधा, वह बिल्कुल सही नहीं है। प्रधानमंत्री किसी पार्टी विशेष का नहीं होता, वह पूरे देश का प्रतिनिधित्व कर रहा होता है। इसी तरह से राहुल गांधी की मणिपुर यात्रा को लेकर BJP नेताओं की टिप्पणी भी स्वीकार्य नहीं है। राहुल गांधी नेता प्रतिपक्ष हैं और उनके पद की अपनी मर्यादा है, जिसका ख्याल सत्ता पक्ष को भी रखना होगा।

ज्ञानेंद्र कुमार, मयूर विहार

■ **भारत-रूस की दोस्ती**

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की दो दिन की रूस यात्रा सफल रही। इस यात्रा से भारत की गुटनिरपेक्ष नीति का सही रूप अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सामने आया। मोदी को रूस का सर्वोच्च नागरिक सम्मान प्रदान किया गया। यह देश के लिए गर्व की बात है। यात्रा के दौरान 9 महत्वपूर्ण समझौते हुए, जो भविष्य में भारत के लिए फायदेमंद साबित होंगे। इस यात्रा से रूस और भारत के बीच का अविश्वास समाप्त हो गया है। साथ ही, चीन और पाकिस्तान को यह संदेश गया कि रूस अब भी भारत का मित्र है।

विभूति बुपक्या, ईमेल से

nbtedit@timesgroup.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

भारत के साथ काम करने को तैयार चीन - एक खबर

- रूस से रिश्ते बढ़ने का चीन पर चल गया जादू!

रवींद्र सेठी

आर.एन.आई. नं. 210-उ.प्र. संवैधानिक सूचित: निजी अनुमति के बिना पुनर्मुद्रण अवैध। लखनऊ में प्रकाशन सुनिश्चित करने वाले, बीनापति राय कश्यप ने मेसर्स एकोमेट के लिए राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, 7 बहादुरशाह जफर मार्ग, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा **राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, नोएडा 2v, सेक्टोरियल ऑफ ऑडिटोरियम** और प्लॉट नंबर 2-ए, सेक्टर 16-ए, इंस्टीट्यूशनल एरिया, ग्रेटर्स नोएडा, उत्तर प्रदेश से मुद्रित। फोन : 2352000 फैक्स 2345240। पंजीकृत कार्यालय : एकोमेट मीडिया लि., मुंबई-400001। विज्ञापन संबंधी शुल्क : 1 रु. प्रति वर्गसे। नेटवर्क में कुल मूल्य : कॉलम में इंचिंग : चेन्नई 5 रु., दीगर : मिनट्स 5 रु.

संपादक (दिल्ली संस्करण) : आशीष पांडे (इस अंक में उपलब्धित समस

मानसून की विभीषिका

शहरों में जल भराव

भारत के शहरों में मानसून के मौसम में बार-बार जल भराव आम हो गया है, पर अधिकारी इसके समाधान में विफल रहे हैं। मानसून मौसम के साथ हमारे प्रेम व घृणा के संबंध हैं। हर साल भयानक गर्मी से राहत देने तथा खेतों में जान डालने के लिए मानसून की बेसबी से प्रतीक्षा होती है। लेकिन इसके आने के बाद भारी मुसीबतें भी आती हैं। इनमें सड़कों पर जल भराव, सामान्य जीवन में बाधा, ट्रैफिक जाम तथा जीवन और संपत्ति का दुर्भाग्यपूर्ण नुकसान शामिल हैं। सिविलियन अधिकारी चाहते हैं कि ऐसी घटनायें न हों। इस साल मुंबई, बैंगलुरू और गुरुग्राम इससे खासतौर से प्रभावित हुए। मानसून से ढांचागत संरचना की चुनौतियां पैदा होती हैं तथा इसके दुष्प्रभाव से बचने के प्रयास किए जाते हैं। भारत की वित्तीय राजधानी मुंबई में मानूसन के मौसम में बाढ़ का लंबा इतिहास है। अक्सर यह शहर सड़कों पर जल भराव, परिवहन व्यवस्थाओं में बाधा तथा घरों के डूबने का सामना करता है। यह साल भी कोई अपवाद नहीं रहा। 'बृहनमुंबई स्टार्मवाटर डिस्पोजल सिस्टम' समेत ढांचागत संरचनाओं में भारी निवेश के बावजूद शहर लगातार बाढ़ की समस्या का सामना कर रहा है। भारी मात्रा में बरसाती जल निकालने वाली व्यवस्था अक्सर विभिन्न कारणों से अपना उद्देश्य नहीं पूरा कर पाती है। इनमें बंद नालियां, अनियोजित शहरीकरण तथा अनुपयुक्त रखरखाव शामिल हैं।

एक समय आनन्ददायक मौसम व हरियाली के लिए विख्यात और 'भारतीय सिलिकान वैली' कहे जाने वाले बैंगलुरू को भी हालिया वर्षों में खतरनाक बाढ़ों का सामना करना पड़ा है। इस मानसून के मौसम में

भी वह जल भराव व ट्रैफिक समस्याओं का सामना कर रहा है। प्रमुख तकनीकी केन्द्र तथा आवासीय क्षेत्र पानी में डूबे हैं जिसके कारण दैनिक जीवन तथा बिजनेस गतिविधियां प्रभावित हुई हैं। इसकी झीलों में से चार में बाढ़ आई है। इसके कारण आने वाले दिनों में शहर को और मुसीबतों का सामना करना पड़ सकता है क्योंकि मौसम विभाग ने दो दिन भारी बरसात का पूर्वानुमान किया है। बैंगलुरू की बाढ़ के अनेक कारण हैं जिनमें तेज शहरीकरण, झीलों तथा 'स्टार्मवाटर ड्रेनों' पर कब्जा तथा अनुपयुक्त कचरा प्रबंधन शामिल हैं। दिल्ली का प्रमुख उप-नगर गुरुग्राम भी मानसूनी विभीषिका से बचा नहीं है। गुरुग्राम अक्सर मानसून में विशाल झील जैसा लगता है। मजेदार बात है कि गुरुग्राम मुंबई या बैंगलुरू की तुलना में हाल ही में बसा है, पर इसे जल भराव व जल निकासी की उन्हीं समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। वास्तव में इसकी परेशानियों का कारण खराब शहरी नियोजन तथ अधिकारियों की संवेदनहीनता है जो समस्याओं की अनदेखी के आदी हैं। मानसून के मौसम में भारतीय शहरों में बार-बार बाढ़ शहरी नियोजन एवं प्रशासन के बारे में गंभीर सवाल खड़े करती है। सवाल है कि बार-बार बाढ़ आने के बावजूद समस्याओं का समाधान क्यों नहीं होता है? मानसूनी बाढ़ का समाधान कोई 'राकेट साइंस' नहीं है। हमारे पास इससे निपटने के तरीके और संसाधन हैं। अनेक शहरों में वर्तमान जल निकासी व्यवस्था पुरानी पड़ गई है तथा वह मानसूनी बरसात में आने वाले पानी से निपट नहीं पाती है। इसमें सुधार या इनका पुनर्निर्माण किया जा सकता है। लेकिन विखंडित प्रशासन तथा विभिन्न नगरीय एजेंसियों के बीच समन्वय के अभाव से प्रभावी जल प्रबंधन नहीं हो पाता है। अक्सर बाढ़ के मूल कारणों को संबोधित किए बिना नीतियों व योजनाओं का क्रियान्वयन समग्र रूप से नहीं होता है। हमें अतीत से सबक लेकर वर्तमान समस्यायें हल करने का प्रयास करना चाहिए।

नेपाल में सत्ता परिवर्तन संभव

नेपाल में नए गठबंधन का उद्देश्य लंबे समय से व्याप्त अस्थिरता समाप्त करने के लिए देश का राजनीतिक परिदृश्य बदलना तथा महत्वपूर्ण संवैधानिक सुधार करना है।

अशोक के. मेहता
(लेखक, सेवानिवृत्त मेजर जनरल हैं)

नेपाल में नए गठबंधन का उद्देश्य लंबे समय से व्याप्त अस्थिरता समाप्त करने के लिए देश का राजनीतिक परिदृश्य बदलना तथा महत्वपूर्ण संवैधानिक सुधार करना है। शुक्रवार को प्रधानमंत्री पुष्प कमल दहल प्रचंड पिछले 18 महीने में पांचवां विश्वास मत प्राप्त करने का प्रयास करेंगे। पूर्व प्रधानमंत्री केपी ओली की यूएमएल ने वामपंथी गठबंधन को दिया जाने वाला समर्थन वापस ले लिया है। पिछले सोमवार को पूर्व प्रधानमंत्री शेर बहादुर देउबा की नेपाली कांग्रेस-एनसी तथा केपी शर्मा ओली की यूएमएल ने आधी रात को 7 सूत्री समझौता किया था। ये देश की सबसे बड़ी तथा दूसरी सबसे बड़ी पार्टियां हैं। दिसंबर, 2022 में तीसरे नंबर की सबसे बड़ी पार्टी सीपीएन माओवादी की 'किंग मेकर' भूमिका समाप्त होने के बाद यह चौथी सरकार होगी। एनसी के एक नेता ने मुझे बताया कि समझौते के एक दिन पहले बेचन झा की गिरफ्तारी ने इस समझौते को और गति दे दी।

बेचन झा को भूटानी शरणार्थी घोटाले में संलिप्त बताया गया था जिसका असर एनसी व यूएमल नेताओं पर पड़ा था। इस कारण जहां एनसी गृह मंत्री रवि लामिछाने पर निशाना लगा रही थी, वहीं यूएमएल संसद में उनका बचाव कर रही थी। कहा जाता है कि पोखरा कोआपरेटिव घोटाला मामले ने समझौते को गति दी क्योंकि 'ओली और देउबा भ्रष्टाचार मामलों से बचना चाहते थे।' काठमांडू के मेयर बालेन शाह ने गिरिबंधु टी इस्टेट भ्रष्टाचार मामले पर तीखी टिप्पणी की थी। केवल दस दिन पहले सरकार ने आठ नए राजदूतों की घोषणा की थी। इनमें भारत में एनसी द्वारा नियुक्त राजदूत शंकर शर्मा भी शामिल थे जो पहले प्रचंड के उस समय वरिष्ठ सहयोगी साझेदार ओली के ऐसे ही प्रयास से बच गए थे।

सात-सूत्री समझौते की मुख्य बात संसद के बाकी बचे 40 महीनों में सत्ता का साझा है। देउबा ने ओली को पहले प्रधानमंत्री बनाने का प्रस्ताव दिया है क्योंकि वे 2027 के आम चुनाव से पहले प्रधानमंत्री बनना चाहते थे। उन्होंने मंत्रालयों के साझे पर भी समझौता किया है। इसके अंतर्गत यूएमएल के पास वित्त तथा एनसी के पास गृह मंत्रालय रहेगा। एनसी और यूएमएल वैसे तो एक दूसरे के घोषित शत्रु हैं और उनकी विचारधारायें अलग-अलग हैं। इन दोनों के नेता बहुत अनुभवी हैं और जेल में भी समय बिता चुके हैं। जहां देउबा पांच बार प्रधानमंत्री रह चुके हैं, वहीं ओली दो बार नेपाल छोड़ कर भाग चुके हैं। देउबा को भारत का समर्थक माना जाता है और पश्चिम भी उनका समर्थन करता है, वहीं ओली को चीन-समर्थक माना जाता है, हालांकि वे दिल से कट्टर कम्युनिस्ट होने के बजाय लोकतंत्रवादी हैं।

नेपाल में 2008 में अंतरिम संविधान के अंतर्गत बहुदलीय व्यवस्था में चुनाव होने के बाद से ही राजनीतिक अस्थिरता व्याप्त है। नेपाल के 16 सांसद पिछले 16 साल में कई बार पार्टियां बदल चुके हैं। यह प्रवृत्ति 2015 में संघीय, लोकतांत्रिक गणतंत्र संविधान लागू होने के बाद भी जारी है। वर्तमान चुनाव व्यवस्था में त्रिशंकु संसद बनती है। संभवत: इस समस्या से निपटने के लिए संविधान बदल कर राष्ट्रीय सहमति सरकार बनाने का लक्ष्य है जिसे 275 सांसदों वाले सदन में 184 सीटों के साथ दो तिहाई बहुमत प्राप्त होगा। यह 110 सीटों के लिए समानुपातिक प्रतिनिधित्व व्यवस्था-पीआर समाप्त करने की पैरवी करेगी, उच्च सदन में परिवर्तन करेगी, नेपाल को 'हिंदू राष्ट्र' घोषित करेगी तथा संघीय व्यवस्था भी समाप्त कर देगी। इन संभावित परिवर्तनों के बारे में काठमांडू में अफवाहें फैल रही हैं। लेकिन इनसे एक संदेश स्पष्ट है कि 20 या 30 विधि निर्माताओं की कथित 'किंग मेकर' वाली भूमिका से दोनों प्रमुख पार्टियां स्वयं को हाशिए पर धकेलना सहन करने को तैयार नहीं हैं।

दस साल तक 'पीपुल्स वार' का नेतृत्व करने तथा परिवर्तनकारी संविधान संशोधनों को लागू कराने वाले प्रचंड भी कोई नौसिखिया नहीं हैं। वे सत्ता पसंद करते हैं और इसे सर्वाधिक महत्वपूर्ण टॉनिक मानते हैं। हालांकि, उनकी पार्टी की चुनावी सफलतायें कमजोर हो रही हैं, पर उन्होंने सुर्खियों में बने रहने में सफलता पाई है। 167 के बहुमत वाले प्रस्तावित वाम-मध्य गठबंधन के बावजूद प्रचंड ने नैतिक आधार पर पराजय मानने से इनकार कर दिया है। उनको उम्मीद है कि संविधान के अनुच्छेद 76-2 के अंतर्गत सरकार गठित होने के कारण राष्ट्रपति रामचंद्र पोडियाल अनुच्छेद 76-3 के आधार पर सबसे बड़ी अकेली पार्टी के नेता देउबा को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित कर सकते हैं जिससे ओली प्रधानमंत्री पद से वंचित हो जाएंगे। प्रचंड तथा दूसरे पूर्व प्रधानमंत्री व पहले यूएमएल में रह चुके माधव नेपाल ओली से घृणा करते हैं और वे यह सुनिश्चित करने का प्रयास करेंगे कि वे दूसरी बार प्रधानमंत्री न बन सकें। वरिष्ठ एनसी नेता शशांक कोईराला ने कहा था कि एनसी-यूएमएल गठबंधन विपक्षी शक्तियों को कमजोर करेगा।

एनसी के एक और सर्वोच्च नेता शेखर कोईराला ने कहा है कि सरकार का गठन विधिक रूप से अनुच्छेद 76-2 के बजाय अनुच्छेद 76-3 के अंतर्गत होगा। इससे आधी रात को हुआ समझौता टूट जाएगा और यह सुनिश्चित होगा कि पहले देउबा प्रधानमंत्री बनें, जबकि प्रचंड उनको पूरे कार्यकाल के लिए प्रधानमंत्री पद देने को तैयार हैं। इससे एनसी, सीपीएन-एम व छोटी पार्टियों का गठबंधन बना रहेगा जो मार्च तक एक साल शासन कर चुका है। चूंकि पोडियाल की नियुक्ति एनसी ने सीपीएन-एम के समर्थन से की थी, इसलिए उनसे 76-2 को खारिज कर 76-3 लागू करने के लिए कहा जा सकता है। एनसी में बहुत से लोग वर्तमान समझौते से असंतुष्ट हैं।

नेपाल की वर्तमान राजनीतिक स्थितियों को देखते हुए स्पष्ट है कि इस बार प्रचंड नीत सरकार गिरने के पीछे चीन या भारत का हाथ नहीं होगा। हालांकि, काठमांडू में ये अफवाहें व्यापक रूप से फैली हुई हैं कि भारत चीन-प्रेरित वाम गठबंधन सरकार से खुश नहीं था। चीन ने नेपाल में राजशाही के खिलाफ उथलपुथल पैदा होने के बाद से ही नेपाली राजनीति को प्रभावित करने के सभी प्रयास किए हैं। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने नेपाल की सभी वामपंथी पार्टियों को एकजुट करने के लगातार प्रयास किए थे। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी ने सभी वामपंथी पार्टियों को यूएमएल के करिस्माई नेता स्वर्गीय मदन भंडारी की पत्नी व पूर्व राष्ट्रपति विद्या देवी भंडारी के नेतृत्व में एकजुट करने का प्रयास किया था, लेकिन ओली ने इस विचार को अस्वीकार कर दिया। चीन सरकार तथा खासकर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को नेपाल में वामपंथी गठबंधन लंबे समय तक न बने रहने से घोर निराशा हुई थी। इसका कारण नेपाली नेताओं व खासकर नेपाली वामपंथी नेताओं की अपनी महत्वाकांक्षायें थीं। लेकिन चीन ने इसका दोष भारत पर मढ़ दिया था। हालांकि, नई दिल्ली भी काठमांडू में ओली को प्रधानमंत्री के रूप में नहीं देखना चाहती थी, पर चीन उनको लगातार वामपंथी गठबंधन में मजबूती से बनाए रखने के सारे प्रयास कर रहा था।

वर्तमान में नेपाल में राष्ट्रीय सहमति सरकार के लिए दो-तिहाई बहुमत प्राप्त करना कठिन नहीं होगा क्योंकि एनसी व यूएमएल के कुल मिला कर 167 विधि निर्माता हैं। लेकिन इसके अलावा नेपाल में राजनीतिक स्थिरता लाने के उद्देश्य से किए जाने वाले संविधान संशोधन के लिए 17 और विधि-निर्माताओं की आवश्यकता होगी। नेपाल की अनेक छोटी पार्टियां भी राजनीतिक स्थायित्व के पक्ष में हैं और वे संभावित राष्ट्रीय सहमति सरकार बनाने के पक्ष में एकजुट हो रही हैं। लेकिन अनेक मुख्य सवाल बने हुए हैं।

पहला सवाल यही है कि एनसी नेताओं द्वारा लामीछाने के खिलाफ भ्रष्टाचार अभियान का क्या होगा जिनका बचाव ओली और प्रचंड कर रहे हैं? यूएमएल द्वारा एनसी-समर्थक राजदूतों का क्या होगा? क्या ओली देउबा के साथ वही करेंगे जो उन्होंने प्रचंड के साथ किया था और सत्ता-साझा समझौते का सम्मान नहीं करेंगे? क्या विपरीत ध्रुवों वाली सरकार बनी रह सकती है या जल्द ही गिर जाएगी?

रूपांतरणकारी स्वास्थ्य रक्षा सुधारों की उम्मीद

> हितधारक इस क्षेत्र में समान पहुंच, नवाचार और स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए बजट में निवेश और नीतिगत सुधार चाहते हैं।

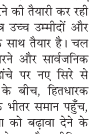

पीएन अरोरा
(लेखक, स्तम्भकार हैं)

जबकि वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण वित्तीय वर्ष 2024-25 के लिए केंद्रीय बजट पेश करने की तैयारी कर रही हैं, स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र उच्च उम्मीदों और दबाव वाली मांगों के साथ तैयार है। चल रही महामारी से उबरने और सार्वजनिक स्वास्थ्य बुनियादी ढांचे पर नए सिरे से ध्यान केंद्रित करने के बीच, हितधारक स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र के भीतर समान पहुँच, नवाचार और स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए रणनीतिक निवेश और नीतिगत सुधारों की ओर देख रहे हैं।

अंतरिम बजट ने निवारक स्वास्थ्य सेवा को बढ़ावा देने के प्रयासों के साथ-साथ मौजूदा अस्पतालों में चिकित्सा शिक्षा सुविधाओं के विस्तार के महत्व को रेखांकित किया। 9-14 वर्ष की लड़कियों के लिए टीकाकरण के माध्यम से गर्भाशय ग्रीवा के कैंसर के मामलों को कम करने के उद्देश्य से एक उल्लेखनीय पहल की भी घोषणा की गई। इसके अलावा, विभिन्न मातृ एवं शिशु देखभाल कार्यक्रमों को एकीकृत करने वाली एक व्यापक योजना की योजना स्वास्थ्य सेवाओं को बढ़ाने के लिए सरकार की प्रतिबद्धता को उजागर करती है। आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना जैसी प्रमुख योजनाओं के लिए बजटीय आवंटन में वृद्धि देखी गई है, जो देश भर में स्वास्थ्य सेवा की पहुंच और परिणामों को बेहतर बनाने पर रणनीतिक ध्यान केंद्रित करती है, मिशन को 2023-24 में 2,100 करोड़ रुपये से बढ़ाकर 2024-25 में 4,108 करोड़ रुपये कर दिया गया।

इसके अतिरिक्त, यू-विन प्लेटफॉर्म जैसी डिजिटल स्वास्थ्य पहलों की शुरूआत का उद्देश्य वैक्सीन वितरण को अनुकूलित करना और बढ़ी हुई डेटा प्रबंधन क्षमताओं के माध्यम से टीकाकरण प्रयासों को मजबूत करना है। अब आगामी बजट स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र के लिए बहुत महत्व रखता है क्योंकि यह परिवर्तन और चुनौतियों के दौर से गुजर रहा है। वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण से ऐसे उपायों की घोषणा करने की उम्मीदें अधिक हैं जो न केवल तत्काल स्वास्थ्य सेवा की जरूरतों को पूरा करें बल्कि दीर्घकालिक सतत विकास का मार्ग भी प्रशस्त करें। बुनियादी ढांचे के निवेश से लेकर डिजिटल स्वास्थ्य एकीकरण और बीमा और शिक्षा में सुधार तक, बजट से आने वाले वर्षों के लिए भारत के स्वास्थ्य सेवा पारिस्थितिकी तंत्र को मजबूत करने का मार्ग प्रशस्त करने की उम्मीद है। स्वास्थ्य सेवा की मांगों का एक महत्वपूर्ण पहलू पहुंच और सामर्थ्य के इर्द-गिर्द घूमता है।

आयुष्मान भारत जैसी पहलों ने सार्वभौमिक स्वास्थ्य कवरेज की नींव रखी है। यह क्षेत्र विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों के लिए सब्सिडी या नि:शुल्क स्वास्थ्य जांच की वकालत करता है, जिसका उद्देश्य निवारक देखभाल और बीमारियों का जल्द पता लगाना है। सरकार की डिजिटल इंडिया पहल के अनुरूप, उन्नत डिजिटल स्वास्थ्य प्रौद्योगिकियों को मुख्यधारा की स्वास्थ्य सेवा में एकीकृत करने का एक मजबूत अवसर है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, इंटरनेट ऑफ थिंग्स और डेटा एनालिटिक्स की परिवर्तनकारी उपकरण के रूप में देखा जाता है जो चिकित्सा परिणामों को बढ़ा सकते हैं, स्वास्थ्य सेवा वितरण को सुव्यवस्थित कर सकते हैं और लागत कम कर सकते हैं।

इस क्षेत्र को मेक इन इंडिया अभियान के साथ संरेखित करते हुए और आयात पर निर्भरता को कम करते हुए चिकित्सा उपकरणों के घरेलू विनिर्माण के लिए प्रोत्साहन और समर्थन की उम्मीद है। मधुमेह, हृदय रोग और कैंसर जैसी गैर-संचारी बीमारियां भारत में स्वास्थ्य पर एक महत्वपूर्ण बोझ हैं।

विशेषज्ञों को गैर-संचारी रोगों की रोकथाम, उपचार और प्रबंधन के लिए बजट आवंटन में वृद्धि की आवश्यकता है। इसमें इन बीमारियों के बढ़ते प्रसार को रोकने के लिए अनुसंधान, जन जागरूकता अभियान और सुलभ उपचार विकल्पों का समर्थन करना शामिल है। स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र को जमीनी स्तर पर स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में सुधार को संबोधित करने के लिए रणनीतिक कदमों की भी उम्मीद है। इसके अतिरिक्त, ऐसी पहलों की भी मांग है जो स्वास्थ्य सेवा कर्मियों को नई तकनीकों का लाभ उठाने और उभरती हुई स्वास्थ्य सेवा मांगों को प्रभावी ढंग से पूरा करने के लिए प्रशिक्षण और कौशल प्रदान करने में सहायता करें। प्रमुख प्राथमिकताओं में भर्ती प्रयासों का विस्तार करने के प्रयास को संबोधित करना शामिल है। उपाय स्वास्थ्य सेवा वितरण में सुधार और देश भर में गुणवत्तापूर्ण चिकित्सा सेवाओं की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

स्वास्थ्य बीमा में, हितधारक वित्तीय सुधारों की मांग करते हैं जो अधिक समावेशी और टिकाऊ स्वास्थ्य कवरेज मॉडल को बढ़ावा देते हैं। इसमें स्वास्थ्य सेवाओं और उत्पादों पर जीएसटी टैरिफ की फिर से समीक्षा करना शामिल है, जो सभी सामाजिक-आर्थिक क्षेत्रों में सामर्थ्य और पहुंच सुनिश्चित करता है। इसके अलावा, केवल प्रतिक्रियाशील चिकित्सा उपचारों पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय निवारक स्वास्थ्य देखभाल उपायों के लिए बीमा कवरेज को प्रोत्साहित करता है। भारत में स्वास्थ्य सेवा ने चिकित्सा पर्यटन में उल्लेखनीय वृद्धि देखी है, जो विदेशी आगंतुकों में उल्लेखनीय वृद्धि द्वारा चिह्नित है। फेडरेशन ऑफ इंडियन चैंबर्स ऑफ कॉमर्स एंड इंडस्ट्री ने कहा है कि भारत में मेडिकल वैल्यू ट्रैवल 2020-2027 तक 21.1 प्रतिशत की सीएजीआर बढ़ने की उम्मीद है। भारत में एमवीटी बाजार का अनुमान 2022 में लगभग 6 बिलियन डॉलर था और 2026 तक बढ़कर 13 बिलियन डॉलर होने का अनुमान है।

यह वृद्धि प्रतिस्पर्धी लागत, उन्नत स्वास्थ्य सेवा सुविधाओं और प्रसिद्ध चिकित्सा विशेषज्ञता द्वारा संचालित चिकित्सा उपचार के लिए एक पसंदीदा गंतव्य के रूप में दुनिया में भारत की बढ़ती प्रमुखता को रेखांकित करती है। इसलिए स्वास्थ्य सेवाओं में भारत की क्षमता और अस्पताल में उत्कृष्टता की प्रमुखता को बनाए रखना जारी रखना है।

आप की बात

सोने-चांदी के दाम

अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में चांदी-सोने में ही जमकर सट्टे बाजी हो रही है। इसके प्रभाव से भारत भी अछूता नहीं है और भारतीय युवा भी इसमें जमकर खेल रहे हैं। हमारे यहां एमसीएक्स के साथ अधिकांश शहरों में एमसीएक्स रेट्स के अनुसार ही डिब्बे पर लेनदेन भी हो रहा है। इससे कुछ युवाओं ने अच्छी कमाई की तो कई आर्थिक रूप से बर्बाद भी हो चुके हैं। यह डब्बा व्यापार गैर-कानूनी है। एक समय चांदी-सोने में 100-200 रुपए की तेजी मंदी पर बाजार में करंट दौड़ जाता था। मगर अब एक 2000 रुपये तक की तेजी मंदी सामान्य हो गई है। सोने की तर्ज पर चांदी में भी तेजी-मंदी होती है। कुछ वर्ष पहले तक 1 किलो चांदी में 20 ग्राम सोना मिल रहा था, मगर अब यह फर्क घटकर 1 किलो चांदी में 13 ग्राम सोना हो गया है। इसका मतलब है कि सोने के बजाय चांदी मे अधिक तेजी आने की संभावना है। एलेक्ट्रॉनिक पार्ट्स के इस युग में चांदी का उपयोग अत्यधिक बढ़ गया है। सोना महंगा होने से लोग चांदी की चैन, अंगूठी, ज्वेलरी, आदि खरीदने लगे हैं। सोने की स्मगलिंग रोकने के लिए सर्राफा व्यापारियों ने वित्त मंत्री को सोना आयात पर कर घटाने का अनुरोध किया है। वैसे सोने का दाम तेजी से बढ़ने का कारण भारत समेत दुनिया भर के बैंकों द्वारा भारी मात्रा में इसकी खरीद भी है।

-सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम

मुस्लिम महिलाओं को सुरक्षा

सुप्रीम कोर्ट ने ऐतिहासिक फैसले में तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को भी उनके पतियों से भरण-पोषण पाने का अधिकारी माना है। यह निर्णय संविधान के मूल सिद्धांतों को और मजबूत करता है। यह फैसला कट्टरपंथी मुस्लिम धर्मगुरुओं से मुस्लिम महिलाओं को सुरक्षा देता है जिनको शरीयत कानूनों के अनुसार तलाक के बाद केवल इद्दत की अवधि में ही भरण-पोषण पाने का अधिकार था। अब उनको धारा 125 के अंतर्गत आजीवन यह अधिकार मिलेगा। सुप्रीम कोर्ट का यह निर्णय उन तमाम राजनीतिक दबावों और धार्मिक विरोधों के बावजूद आया है जो इसे कमजोर करने की कोशिश कर रहे थे। यह फैसला राजीव गांधी सरकार के समय लिए निर्णय को उलट कर स्पष्ट करता है कि भारत का संविधान किसी धर्म-विशेष के हिसाब से नहीं चलेगा, बल्कि सभी नागरिकों को समान दृष्टि से देखेगा। सर्वोच्च न्यायालय के इस फैसले से स्पष्ट है कि राजीव गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार ने अल्पसंख्यक तुष्टीकरण व वोटबैंक राजनीति के चलते मुस्लिम महिलाओं को एक महत्वपूर्ण अधिकार से वंचित कर उनका दर्जा देश की अन्य धर्मावलंबी महिलाओं, खासकर हिंदू महिलाओं की तुलना में गिरा दिया था।

- अवनीश कुमार गुप्ता, आजमगढ़

भारत-रूस दोस्ती

रूस भारत का सदाबहार मित्र है तथा वह हमारा सुख.दु:ख का साथी हमेशा से रहा है। प्रधानमंत्री मोदी ने ये बातें कह कर भारत-रूस दोस्ती की व्यापकता प्रदर्शित की है। मोदी का रूसी राष्ट्रपति व्लादिमिर पुतिन ने गर्मजोशी से स्वागत कर उनको अपने देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मान से सम्मानित भी किया। मोदी ने अपना स्वागत करने वाले रूस में रहने वाले भारतीयों से कहा कि पिछले 10 वर्षों में हुआ भारत का विकास सिर्फ ट्रेलर है, अभी तो बहुत कुछ करना बाकी है। मोदी को भारत के इतिहास में लगभग 60 साल बाद लगातार तीसरी बार देश की 140 करोड़ जनता का आशीर्वाद मिला है। रूसी राष्ट्रपति पुतिन समेत सारी दुनिया यह तथ्य भलीभांति जानती है। सारी दुनिया में इससे मोदी के साथ ही भारतीय लोकतंत्र का कद भी बढ़ा है। लेकिन विडंबना है कि मोदी-विरोध में अंधा हुआ विपक्ष इसे देखने से इनकार करता है। एक विपक्षी नेता ने सफेद झूठ बोला कि रूस का सर्वोच्च सम्मान इसके पहले अनेक भारतीय प्रधानमंत्रियों को मिल चुका है। इसके साथ ही कांग्रेस पार्टी ने मोदी व पुतिन के बीच बिना अनुवादक के बातचीत का भी मजाक उड़ाया। इससे दुनिया में भारतीय विपक्षी नेताओं का ही मजाक उड़ता है कि वे देश की प्रगति नहीं देख रहे हैं।

-शकुंतला महेश नेनावा, इंदौर

रेलवे का फैसला

रेलवे ने सख्त निर्णय लिया है कि ट्रेनों में वेटिंग और जनरल टिकट लेकर स्लीपर और एसी कोच में सफर करने पर अब पेनल्टी भरनी होगी। एसी कोच में वेटिंग टिकट पर सफर करने पर 440 रुपये की पेनल्टी और अगले स्टेशन का किराया भी देना होगा। स्लीपर कोच में वेटिंग टिकट पर सफर करने पर 250 रुपये की पेनल्टी और अगले स्टेशन का किराया भी देना होगा। रेलवे प्रयास कर रहा है कि अगले दो महीने में वेटिंग टिकट का झंझट ही खत्म हो जाए। यह खबर स्वागत योग्य है। यात्री महीनों पहले इस आशा में टिकट बुक करता है कि उसका टिकट कन्फर्म हो जाएगा, मगर सफर के दिन भी कन्फर्म न होने के कारण मजबूरी में वह एसी या स्लीपर कोच में सफर करता है। जब वेटिंग टिकट ही नहीं होंगे तो कोई समस्या ही नहीं रहेगी। लेकिन रेलवे को बड़ी संख्या में यात्रियों की समस्यायें व मजबूरी भी समझनी चाहिए। रेलवे को आम जनता की सवारी माना जाता है, लेकिन अब वह आम जनता, खासकर गरीब लोगों से दूर होती जा रही है। यात्री सुविधा, आमदनी तथा सरकार की जिम्मेदारी के बीच संतुलन बनाने की जरूरत है।

- हेमा हरि उपाध्याय, उज्जैन

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।